॥ खास जरूरी सूचना ॥

श्रीयुत—आनंदी लाल जी जिन्दाणी की तरफ से कोई भी धार्मिक ग्रन्थ छपवाकर श्री संघको अमूल्य भेट देने के लिये २३८॥) यहां जैन प्रेस में पौष वदी १२ सम्वत् १९८९ को पेशगी जमा हुए थे इसलिय श्री अनुत्तरोववाई सूत्र हिन्दी अनुवाद सहित उनके नाम से छपवा कर साधु—साध्वी—ज्ञान भंडार लायब्रेरी और प्रत्येक गांव के श्री संघ को यह सूत्र भेट दिया जाता है इसको उपयोग पूर्वक, विनय सहित, यत्ना से वारंवार अध्ययन कर भव्यजन अपना आतम कल्याण का मार्ग अंगीकार करें यही प्रार्थना है।

॥ जाहिर खबर ॥

हिन्दी कल्पसूत्र अल्प मूल्य २), दशवैकालिक मूल भावार्थ सहित १), पर्व कथा संग्रह साधु श्रावक आराधना सहित १), विपाक सूत्र मूल्य २) स्थाई ग्राहकों को १॥) और सहायता दाताओं को भेट, अंतगडदशा सूत्र मूल—अर्थ सहित भेट अनुत्तरोववाइय मूल-भावार्थ सहित भेट तथा उववाई, ज्ञाताजी, उत्तराध्ययन, उपासक दशा आदि छप रहे हैं।

मिलने का ठिकाना:—
श्री हिन्दी जैनागम प्रकाशक सुमति कार्यालय
जैन प्रेस, कोटा (राजपूताना)

॥ शुभ सन्देश ॥

अवश्य पढ़ें ! सहायता दें !! बड़ा लाभ लें !!!

श्वेताम्बर जैन समाज में ज्ञान प्रचारक अनेक संस्थाएँ हैं परन्तु उन्होंको दूसरे प्रेसों में ग्रन्थों की छपाई करवाने में अधिक खर्च आदि कारणों से ग्रन्थोंका मूल्य अधिक रहता है, आर्य समाजी और ईसाई लोग निजी प्रेसोंमें छपाई कराकर अल्प मूल्य में अपने २ धर्म ग्रन्थों का प्रचार कररहे हैं, इसी तरहसे श्वेताम्बर जैन समाजभी निजी प्रेसमें ग्रंथ छाप कर अल्प मूल्यमें धार्मिक ग्रंथोंका प्रचार करसके इसलिये महोपाध्यायजी श्रीसुमतिसागरजी महाराजके उपदेशसे कोटा-छवडाके संघने यहां 'जैन प्रेस' खोला है, ज्ञान प्रचारके साथ २ प्रेसकी बचत जीवदया आदि परोपकार में खर्च करनेका उद्देश रक्खा गया है, अभी हिंदी भाषा में सूत्रों के प्रकाशन का कार्य शुरु है, श्री हिन्दी जैनागम प्रकाशक सुमति कार्यालय की विनती स्वीकार करके जिन २ महानुभावों ने सूत्रों के अनुवाद करने का मन्जूर किया है उन्हों के शुभनाम इस प्रकार हैं:—श्रीमान् जिन चारित्र सूरिजी महाराज ठाणांग, श्रीमाज्जिन हरिसागरसूरिजी महाराज उववाई, वीरपुत्र श्रीआनन्दसागरजी म० विपाक व अनुत्तरोववाई, श्रीकवीन्द्रसागरजी म० रायप्रसेनीय, पं०प्र० श्रीसूर्यमलजी म० निरियावली, श्रीमती विनय श्रीजी उपासकदशा, श्रीमती प्रमोदश्रीजी प्रश्नव्याकरण, श्रीमती उमंगश्रीजी कल्याणश्रीजी जीवाभिगम, श्रीमती वल्लभश्रीजी समवायांग, श्रीमती बुद्धि श्रीजी ज्ञाताजी और ताराचंद जैन ने उत्तराध्ययनजी का अनुवाद करने का मन्जूर किया है तथा आचारांग, सूयगडांग, जम्बूद्वीपपन्नत्ति, नंदीजी और अनुयोगद्वार आदि के लिये पत्र व्यवहार हो रहा है। इसमें कल्पसूत्र, दशवैकालिक, पर्वकथा संग्रह विपाक और अनुत्तरोववाई

छप चुके हैं और उववाई, अंतगडदशा आदि छपरहे हैं तथा अन्य सूत्रों को छपाने का व ५०० जगह अमूल्य भेट देने का प्रबन्ध होरहा है।

इस उद्देशकी पूर्त्ति के लिये १५००० का सहायता फण्डकी योजना की है उसमें उपदेश देकर सहायता दिलवाने वालों के शुभ नाम ये हैं— श्रीमज्जिन हरिसागरसूरिजी महाराजके उपदेशसे १५००) सहायता फण्डमे, उववाई छपवाने में १०००), श्रीमान् मंगलसागरजी म० के उपदेश से १००) विपाकमें, श्रीमती साध्वीजी चन्दन श्रीजी के उ० से २००), श्रीमती जतन श्रीजी के उ० से २००), श्रीमती प्रताप श्रीजी के उ० से १००), श्रीमती दया श्रीजी के उ० से १००), श्रीमती प्रमोद श्रीजी के उ० से १००), श्रीमती देव श्रीजी के उ० से १००), श्रीमती प्रेम श्रीजी के उपदेशसे १००) सहायता फंडमें, २००) विपाक सूत्र में व ४००) अंतगड दशा में, श्रीमती ज्ञानश्रीजी वल्लभश्रीजी के उ० से २००), श्रीमती गुणश्रीजी के उ० से १००), श्रीमती कनक श्रीजी के उ० से ६०), श्रीमती विनय श्रीजी के उ० से ३२५) उपासक दशामें, श्रीमान् दीवान बहादुर सेठ केशरी सिंहजी १००) इस प्रकार भर गये है और मुंबई, कलकत्ता, बीकानेर आदिमें भरानेका प्रयत्न शुरू है इसमें से बहुत रकम सेठ जी के यहाँ आकर जमा हो चुकी है और बाकी आने वाली है इसका विशेष विवरण दूसरे सूत्र में छापा जायेगा। इन अनुवादक महाशयों को और सहायदाता उपदेशक महाशयों को हम बारम्वार धन्यवाद देते हुए बड़ा उपकार मानते हैं और आशा करते हैं कि भविष्य में भी सूत्रों के अनुवाद में तथा सहायता फण्डमें यथोचित सहायता देकर ज्ञान दान के लाभ के भागी बनें और हमारे उत्साह को बढ़ाते रहें।

मिति पौष शुदी १४ सम्वत् १९९२
तारीख ७ जनवरी सन् १९३६

निवेदक.—चन्दनमल रखिनदास लूणिया सेक्रेटरी
श्री हिन्दी जैनागम प्रकाशक सुमति कार्यालय जेन प्रेस, कोटा

ॐ

प्राक्कथन

मुमुक्षों !

अनासक्त योग की त्यागरूप अनेक पुष्पलताएँ हैं, जिसमें तपश्चर्या संज्ञिका कुसुमलता की परिमल (सुगन्ध) विशेष आनन्दप्रदा है-सब व्रतों में अस्वाद व्रत (रूखा-सूखा आहार करना) का पालन कठिन समस्या है, परन्तु इससे भी अधिक क्लिष्टतर व्रत तपश्चर्या (आहार त्याग) है, कारण कि अनाहारिक पद सर्व श्रेष्ठ पद है-यह "अनुत्तरोपपातिक दशा सूत्र" नामक नवां अंग तपश्चर्या की महक से महक रहा है।

यह सूत्र तीन वर्ग के तेंतीस अध्ययनों से भूषित है, इसमे धन्य अनगार की कुछ विस्तृत जीवनी उपलब्ध होती है, इन महापुरुष ने तो संसार की तपश्चर्या का रेकार्ड (पुराना इतिहास) तोड़ दिया है, इस तरह करीब २ तेंतीस ही महापुरुष समान कोटि के हैं; ये पुरुषोत्तम मात्र श्लाघा करने योग्य ही नहीं हैं; किन्तु वन्दनीय-स्तवनीय और आदरणीय हैं, इनके जीवन भव्यात्माओं को समाचरणीय हैं।

मैं अपना बड़ा भारी सौभाग्य समझता हूँ कि इस उत्तमांग का राष्ट्रीय भाषा में (हिन्दी भाषा में) अनुवाद करने का मुझे अलभ्य लाभ प्राप्त हुआ है। महानुभावों ! इस आदर्श ग्रंथ का आद्योपान्त मनन पूर्वक अध्ययन करें, यह मेरा नम्र निवेदन है।

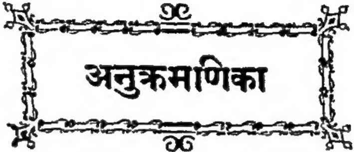
शान्तिः

भवदीय.—

वीरपुत्र आनन्द सागर.

ॐ

॥ श्री अनुत्तरोपपातिकदशा – हिन्दी अनुवाद ॥



अनुक्रमणिका

॥ द्वि

❀ ॐ नमः ❀

श्री अनुत्तरोपपातिकदशा सूत्र

❀ हिन्दी अनुवाद ❀





अनुवादक–प्रखरवक्ता वीरपुत्र श्रीआनन्द सागरजी महाराज.

(मङ्गलाचरण)

वीतराग को नमन कर । गुरुपुङ्गव आधार ॥
अनुत्तरोपपातिकदशा । हिन्दी रचना सार ॥१॥

विश्वतारक, जगद्वंद्य, शासनपति, भगवन्त महावीर देव को अभिवन्दन कर एवं शासनसम्राट्, जैन–शासन दीपक श्री जिनदत्त–कुशल सूरीश्वरादि गुरुदेवों को नमन कर नववें अङ्ग "श्री अनुत्तरोपपातिकदशा

सूत्र" (अणुत्तरोववाइय सूत्र) का भारतीय भाषा में मैं अनुवाद करता हूँ; आत्मार्थी जन इसका लक्षपूर्वक अध्ययन कर आत्मश्रेय करें।

※ प्रारम्भ ※

प्रारम्भ में ही हमें यह अभिलाषा होती है कि "अनुत्तरोपपातिकदशा" का अर्थ क्या है? टीकाकार महाराज भगवान् श्री अभयदेव सूरीश्वरजी इसका इस प्रकार खुलासा फरमाते हैं— अनुत्तर नामके सर्वोत्तम विमानों में जिनका जन्म हुवा है ऐसे दस जीवों का बयान दस अध्ययनों द्वारा कथन करने वाला सूत्र 'अनुत्तरोपपातिक दशा' कहा जाता है- यहां पर पहिले वर्ग में दस अध्ययन कहे जायगें; उनका सम्बंध सूत्र तथा उस की व्याख्या ज्ञाताधर्मकथा सूत्र के पहिले अध्ययन में बताये हुवे के समान है; शेष सूत्र प्रायः सुगम है।

पीठिका

❁ पूज्य गुरुदेव से शिष्यरत्न की पृछा—गुरुवर्य का प्रत्युत्तर ❁

मूल— तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णगरे अज्जसुहम्मस्स समोसरणं परिसा णिग्गया जाव जंबू पज्जुवासति, एवं वयासी– जतिणं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अगस्स अंतगडदसाणं अयमट्ठे पण्णत्ते, नवमस्स णं भंते ! अंगस्स अणुत्तरोववाइयदसाणं जाव संपतेणं के अट्ठे पण्णत्ते ? तते णं से सुधम्मे अणगारे जंबू अणगारं एवं वयासी– एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं नवमस्स अंगस्स अणुत्तरोववाइयदसाणं तिण्णि वग्गा पण्णत्ता, जतिणं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं नवमस्स अंगस्स अणुत्तरोववाइयदसाणं तिण्णि वग्गा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते ! वग्गस्स अणुत्तरोववाइयदसाणं कइ अज्झ-यणा पणत्ता ? एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अणुतरोववाइयदसाणं पढमस्स वग्गस्स दस अज्झ-यणा पण्णत्ता; तंजहा—

जाली १ मयाली २ उवयाली ३ । पुरिससेणे य ४ वारिसेणे य ५ ॥

दीहदंते य ६ लंठदंते य ७ । वेहल्ले ८ वेहासे ९ अभये १० ति य कुमारे ॥ १ ॥

भावार्थ— चतुर्थ कालके समय क्षेत्रस्पर्शना के अवसर में वीरप्रभु के पटोधर पंचम गणधर श्री आर्य सुधर्म्म स्वामी राजगृही नगरी के उद्यान में समवसरे यानी पधारे; वनपालक द्वारा खबर मिलने पर नगरी से प्रजा पर्षदा वन्दनार्थ निकली, धर्मदेशना श्रवण के पश्चात् पर्षदा के लोग अपने २ स्थान पर वापिस चले गये; यावत् जम्बू स्वामी गुरु महाराज की सेवा करने लगे, पश्चात् वे विनयपूर्वक इस प्रकार बोले— हे पूज्यवर्य्य ! श्रमण भगवन्त महावीर देव यावत् मोक्ष को पधारेने आठवें अङ्ग अन्तगडदशा का यह अर्थ (जो आपने पूर्व में फरमाया है) प्रकाशित किया है, तो हे स्वामिन् ! परमात्मा ने यावत् मोक्ष को पधारेने नववें अङ्ग अणुत्तरोपपातिकदशा का क्या अर्थ फरमाया ? इस पर उन सुधर्म अनगार ने जम्बू अनगार को इस कदर कथन किया— निश्चय इस प्रकार हे जम्बो ! श्रमण भगवन्त यावत् मोक्ष को पधारेने नववें अङ्ग अणुरोपपातिकदशा के तीन वर्ग बताये हैं. जम्बू स्वामी ने पुनः प्रश्न किया— हे भगवन्त ! श्रमण० महावीर देव यावत् मोक्ष को पधारे ने नववें अङ्ग अणुत्तरोपपातिकदशा के तीन वर्ग बताये तो हे पूज्यवर्य्य ! अणुत्तरोपपातिकदशान्तरगत प्रथम वर्ग के कितने अध्ययन दिखलाये ? इन पर गुरु महाराज ने उत्तर दिया— इस तरह निश्चय हे जम्बो ! श्रमण भगवन्त यावत् मोक्ष को पधारे ने अणुत्तरोपपातिकदशान्तरगत पहिले वर्ग के दस अध्ययन फरमाये; वे ये हैं—

१ जाली कुमार २ मयाली कुमार ३ उपजाली कुमार ४ पुरुषसेन कुमार ५ वारिसेन कुमार

६ दीर्घदन्त कुमार ७ लष्टदन्त कुमार ८ वेहल्ल कुमार ९ वेहास कुमार १० अभय कुमार
इस प्रकार दस अध्ययनों के नाम बताये गये.

प्रथम वर्ग

पहिला अध्ययन

(जाली कुमार)

मूल— जइणं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं पढमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पन्नत्ता, पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स अणुत्तरोववाइदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

भावार्थ— जम्बु स्वामी ने पुनः प्रश्न किया– हे भदन्त ! श्रमण भगवन्त यावत् मोक्ष को पधारे ने पहिले वर्ग के यदि दस अध्ययन जाहिर किये तो हे पूज्य भगवन् ! अणुत्तरोपपातिक के पहिले अध्ययन का श्रमण० महावीर प्रभु यावत् मोक्ष को पधारे ने क्या अर्थ प्रकाशित किया ? इस पर सुधर्मस्वामी गणधर महाराज ने इस प्रकार बयान किया—

जाली कुमारने प्रभु की धर्मदेशना सुनी—
वैराग्य उत्पन और दीक्षा ग्रहण

मूल—एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णगरे रिद्धत्थिमियसमिद्धे गुणासिलए चेतिए सेणिए राया धारिणी देवी सीहो सुमिणे जाली कुमारो जहा मेहो अट्ठओ दाओ जाव उप्पिंपासाए जाव विहराति, सामी समोसढे सेणिओ णिग्गओ जहा मेहो तहा जाली वि णिग्गतो तहेव णिक्खंतो जहा मेहो, एकारस अंगाइं अहिज्जाति, गुणरयणं तवोकम्मं ।

भावार्थ— इस प्रकार निश्चय हे जम्बो ! चतुर्थ आरे में जाली कुमार के समय ऋद्धिपूर्ण निर्भय और समृद्धिशाली राजगृही नामका नगर था. नगर के बाहर गुणशील नामका उपवन था, उस नगर में श्रेणिक नामक राजा राज्य करता था, उसके धारिणी नामकी रानी थी, उसने एकदा स्वप्न मे सिंह देखा, इसके प्रभाव से पूर्ण-मास होने पर पुत्र का जन्म हुवा, उसका ' जाली कुमार ' नाम रक्खा—यहां पर मेघकुमारवत् सब वर्णन करना

युवा अवस्था होने पर मात–पिता ने आठ राजकन्याओं के साथ विवाह कराया, आठ २ महल वगैरा प्रीतिदान दिया, यावत् उन आठ रमणियों के साथ यावत् आनन्द पूर्वक क्रीड़ा करता हुवा रहता था– एक वख्त गुणशील चैत्य में भगवन्त महावीर देव समवसरे, उनको वन्दन करने को महाराजा श्रेणिक और प्रजा के लोग नगर से रवाना हुवे, यह सुनकर मेघकुमार की तरह जाली कुमार भी नगर से निकला, धर्मदेशना श्रवण की, मेघकुमार की तरह जाली कुमार ने पूर्ण वैराग्य से भवतापहरणी दीक्षा अंगीकार की, क्रमशः ग्यारह अङ्गों का अध्ययन किया तथा गुणरत्न नामक तप किया. इसका वर्णन हस्तलिखित प्रति से यहां पर उद्धृत करते हैं—

गुणरत्न तपश्चर्या का विधान

पन्द्रह मास की मर्यादा वाला यह ' गुणरत्न ' तप है. देखिये– पहिले मासमें एक दिन उपवास और एक दिन पारणा यानी एकान्तर उपवास करे, दिनको उत्कट आसन से सूर्य के सन्मुख रहकर आतापना सहन करे रात्री में वस्त्ररहित यानी नग्न होकर वीरासन से रहे— दूसरे मासमें अन्तर रहित बेले २ पारणा करे; दिन–रात्री की चर्या प्रथम मासवत् करे– तीसरे मासमें अन्तर रहित तेले २ पारणा करे; दिन रात्री की चर्या प्रथम मासवत्

चौथे मास में अन्तर रहित चोले २ पारणा करे; क्रिया पूर्ववत्- पांचवें मास में पंचोले २ पारणा करे; क्रिया पूर्ववत्- इसही प्रकार प्रत्येक मास में एक २ उपवास की क्रमशः वृद्धि करते जाना, यावत् पन्द्रहवें मास में अन्तर रहित पक्षक्षमण २ (पन्द्रह २ दिन) में पारणा करे; दिन को उत्कट आसन से सूर्य के सामने रहकर आतापना सहन करे और रात्री में वस्त्र रहित यानी नग्न होकर वीरासन से रहे- इस कदर का यह 'गुणरत्न तप' जाली कुमार ने किया था.

जाली कुमार का अनुत्तर स्वर्गवास

मूल— एवं जा चेव खंदगवत्तव्वया सा चेव चिंतणा आपुच्छणा थेरेहिं सद्धिं विपुलं तहेव दुरुहति, नवरं सोलस वासाइं सामन्नपरियागं पाउणित्ता कालमासे कालं किच्चा उड्ढं चंदिमाइ सोहम्मीसाण जाव आरणच्चुए कप्पे नव य गेवेज्जे विमाणपत्थडे उड्ढं दूरं वीतीवतित्ता विजयविमाणे देवत्ताए उववण्णे ।

भावार्थ— इस प्रकार यावत् खंदक के वृतान्त में कहा गया है उसही तरह जानना, उसही मुआफिक

अनशन के लिये विचारना, भगवन्त को पूछना और स्थविर मुनियों के साथ विपुलगिरी पर चढ़कर अनशन करना; समझना चाहिये, विशेष बात यह है कि अर्थात् अन्तर मात्र यह है कि सोलह वर्ष पर्यन्त चारित्र पर्याय (संयम काल) पालकर काल समय यानी आयुष्य पूर्ण होने पर कालकर चन्द्रादि के विमानों से ऊपर सौधर्म-इशानादि यावत् आरण-अच्युत कल्प को टपकर नवग्रैवेयक विमान के प्रतरों से भी ऊपर अति दूर जाकर विजय नामके अनुत्तर विमान में देवपने उत्पन्न हुवे.

स्वर्गवास के पीछे मुनियों का क्रिया कर्म गौतम गणधर की प्रश्नावली—प्रभुका प्रत्युत्तर

मूल— तते णं ते थेरा भगवंतो जालीं अणगारं कालगयं जाणेत्ता परिनिव्वाणवत्तियं काउसग्गं करेंति २ त्ता पत्ताचिवराइं गेण्हंति तहेव ओयरंति जाव इमे से आयार भंडए, भंते ! त्ति भगवं गोयमे जाव एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी जाली नामं अणगारे पगति भद्दए से णं जाली अणगारे

कालगते कहिं गते ? कहिं उववज्जे ? एवं खलु गोयमा ! ममं अंतेवासी तहेव जहा खंदयस्स जाव कालगए उड्ढं चंदिम जाव विजए विमाणे देवत्ताए उववण्णे ।

भावार्थ— तदन्तर उन स्थविर ज्ञानियों ने जाली अनगार को कालधर्म प्राप्त हुवे जानकर कालधर्म सम्बंधी काउसग्ग किया * करके उन के वस्त्र-पात्र आदि (धर्मोपगरण) ग्रहण किये, तथैव (जिस तरह गये थे उसही तरह) पर्वत पर से नीचे उतरे, यावत् (भगवन्त के पास जाकर सर्व वृतान्त कहकर कहा कि ' ये उनके आचार भांड-यानी धर्मोपगरण ' यह कहते हुवे सर्व धर्मोपगरण भगवन्त के सामने रक्खे- इस समय गणधर गौतम ने भगवन्त महावीर देव से पूछा- निश्चय इस प्रकार देवों के वल्लभ ऐसे आपके शिष्य जालीकुमार नाम के अनगार प्रकृतिभद्र × गुणवाले जाली अनगार काल करके कहां गये ? कहां उत्पन्न हुवे ? परमात्मा ने उत्तर

---

* इस से यह स्पष्ट है कि मुनि के कालधर्म के पश्चात् पासवाले मुनिजन मात्र " महापारिट्ठावणियं का तथा असज्झाय उड्डाव-णार्थ ' का काउसग्ग करते थे, यह उचित, इष्ट और पर्याप्तया, पिछले आचार्यों ने अन्त क्रिया इतनी लम्बी चौडी-करदी है कि जो निवृत्ति मार्ग को धक्का लगाने वाली और प्रवृत्ति मार्ग की वृद्धिकरने वाली है, निवृत्ति मार्ग के उपासकों को इसमें संशोधन करने का प्रयास करना चाहिये

× स्वाभाविक सरल को 'प्रकृतिभद्र' कहते हैं, अर्थात् स्वार्थवश वा भयवश, वा मोहवशादि कारणों से कल्पित सरलता वाला सरल नहीं कहा जाता

दिया- निश्चय इस प्रकार हे गौतम ! मेरा शिष्य जाली अनगार उसही तरह यानी खंदक अनगार के मुआफिक यावत् कालधर्म प्राप्त कर चन्द्रविमान के ऊपर यावत् विजय नाम विमान में देवपने उत्पन्न हुवा है.

**जाली कुमार के लिये भाविपृच्छा
प्रभु का प्रत्युत्तर.**

मूल— जालिस्स णं भंते ! देवस्स केवतियं कालं ठिती पण्णत्ता ? गोयमा ! बत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता, सेणं भंते ! ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं ३ (भवक्खएणं ठिइक्खएणं) कहिं गच्छि-हिति ? कहिं उववज्जिहिति ? गोयमा ! महाविदेह वासे सिज्झिहिति, ता एवं जंबू ! समणेणं जाव संप-त्तेणं अणुत्तरोववाइयदसाणं पढमवग्गस्स पढमज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते- पढममज्झयणं सम्मत्तं. ॥ १ ॥

भावार्थ— गौतम स्वामी पूछते हैं– हे भगवन्त ! जाली देव की कितने काल की स्थिति बताई? परमात्मा ने उत्तर दिया– हे गौतम ! बत्तीस सागरोपम की स्थिति कही गई. गौतम गणधर ने पुनः प्रश्न किया– हे भगवन्त ! वह जाली देव देवलोक की आयुष्य क्षय कर ३ (भव क्षय कर–स्थिति क्षयकर) कहां जावेंगे ? कहां उत्पन्न होंगे ? प्रभु ने फरमाया– गौतम ! वह जाली देव देवलोक से च्यवकर महाविदेह क्षेत्र में उच्चकुल में उत्पन्न हो चारित्र ग्रहण कर मोक्षपद प्राप्त करेगा— सुधर्म स्वामी फरमाते हैं— हे जम्बो ! श्रमण भगवन्त महावीर देव यावत् मोक्ष को पधारेने अनुत्तरोपपातिकदशा के प्रथम वर्ग के पहिले अध्ययन का इस प्रकार अर्थ यानी बयान फरमाया है— पहिले अध्ययन का भावार्थ पूर्ण हुवा.

प्रथम वर्ग का पहिला अध्ययन मूल और भावार्थ सहित सम्पूर्ण.



❋ दूसरा अध्ययन यावत् दसवाँ अध्ययन ❋

(मयाली कुमार यावत् अभय कुमार)



नव कुमारों का संक्षिप्त आख्यान

मूल— एवं सेसाणवि अट्ठण्हं भाणियव्वं, नवरं सत्त धारिणी सुआ वेहल्लवेहासा चेल्लणाए, आइ-ल्लाणं पंचण्हं सोलस वासातिं सामन्नपरियातो तिण्हं वारस वासातिं दोण्हं पंच वासातिं, आइल्लाणं पचण्हं आणुपुव्वीए उववायो विजये वेजयंते जयंते अपराजिते सव्वट्ठसिद्धे, दिहदंते सव्वट्ठसिद्धे, उक्कमेणं सेसा अभओ विजए, सेसं जहा पढमे, अभयस्स णाणत्तं, रायगिहे नगरे सेणिए राया नंदादेवी माया सेसं तहेव, एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अणुत्तरोववाइयदसाणं पढमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पन्नत्ते. (सूत्र १)

भावार्थ— इस ही प्रकार आठ कुमारों के आठ अध्ययन कहना; विशेष बात यह है कि— पहले सात कुमार (१ जाली २ मयाली ३ उपजाली ४ पुरुषसेन ५ वारिसेन ६ दीर्घदन्त ७ लष्टदन्त) धारिणी माता के थे तथा वेहल्ल और वेहास; ये दो चेल्लणा रानी के पुत्र थे; आदि के पांच कुमारों का सोलह वर्ष का चारित्र पर्याय था, इनके बाद के तीन कुमारों का बारह वर्ष का चारित्र पर्याय था, और आखिरी दो का पॉच वर्ष का चारित्र पर्याय था— सब जने यहां से कालधर्म पाकर अनुत्तर विमानों में उत्पन्न हुवे, उनमें से पहिले के पांच क्रमशः विजय—विजयन्त—जयन्त—अपराजित और सर्वार्थसिद्ध में उत्पन्न हुवे; छट्ठे दीर्घदन्त सर्वार्थसिद्ध में उत्पन्न हुवे, बाकी तीन कुमार उत्क्रम से यानी अपराजित—जयन्त और वैजयंत मे जन्म पाये, अभय कुमार यानी आखरी दसवें कुमार की विजय विमान में उत्पत्ति हुई है; बाकी सब वृतान्त पहिले अध्ययन के समान जान लेना— अभय कुमार के लिये इतना विशेष है कि— राजगृही नगर में श्रेणिक राजा की नन्दा नामकी रानी अभय की माता थी शेष अधिकार पूर्ववत् जानना. सुधर्म स्वामी फरमाते हैं— हे जम्बो ! इस प्रकार निश्चय श्रमण भगवन्त महावीर देव यावत् मोक्ष को पधारे ने अनुत्तरोपपातिकदशा सूत्र के पहिले वर्ग का इस प्रकार अर्थ यानी बयान फरमाया है. (सूत्र १) प्रथम वर्ग का भावार्थ सम्पूर्ण हुवा.

उपसंहार

इस प्रथम वर्ग में दस महा पुरुषों की तपश्चर्या का भव्य उल्लेख है, तप विना दैहिक और मानसिक शुद्धि संभव नहीं; अतएव पतितपावनकर्तृ तपश्चर्या की आप अवश्य आचरणा करके आत्मोन्नति करें.

दूसरा अध्ययन यावत् दसवां अध्ययन मूल और भावार्थ सहित सम्पूर्ण

❀ प्रथम वर्ग समाप्त ❀

द्वितीय वर्ग

(वीजक)

मूल—जंति णं भंते ! समणेणं जाव सपत्तेणं अणुत्तरोववाइयदसाणं पढमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पन्नत्ते दोच्चणस्स णं भते ! वग्गस्स अणुत्तरोववाइयदसाणं समणेणं जाव सपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते? एवं खलु जम्बू !

समणेणं जाव संपत्तेणं दोच्चस्स वग्गस्स अणुत्तरोववाइयदसाणं तेरस अज्झयणा पन्नत्ता; तंजहा—

दीहसेणे १ महासेणे २ । लट्ठदंते य ३ गूढदंते य ४ ॥
सुद्धदंते ५ हल्ले ६ । दुमे ७ दुमसेणे ८ महादुमसेणे य ९ ॥ १ ॥
आहिते सीहे य १० । सीहसेणे य ११ महासीहसेणे य १२ ॥
आहिते पुन्नसेणे य १३ बोधव्वे तेरसमे होंति अज्झयणे ॥ २ ॥

भावार्थ— सुधर्म गणधर महाराज को जम्बू अनगार पूछते हैं— हे पूज्य ! श्रमण भगवन्त महावीर देव यावत् मोक्ष को पधारे ने यदि अनुत्तरोपपातिकदशा के पहिले वर्ग का इस तरह (ऊपर कहा गया) अर्थ बयान किया तो हे भदन्त ! अणुत्तरोपपातिकदशा के दूसरे वर्ग का श्रमण भगवन्त महावीर देव यावत् मोक्ष को पधारे ने क्या अर्थ फरमाया ? इस पर सुधर्म स्वामी फरमान करते हैं— इस प्रकार निश्चय हे जम्बो ! श्रमण भगवन्त यावत् मोक्ष को पधारे ने अनुत्तरोपपातिकदशा के दूसरे वर्ग के तेरह अध्ययन फरमाये हैं; वे इस तरह हैं—

१ दीर्घसेन २ महासेन ३ लष्ठदन्त ४ गूढदन्त ५ शुद्धदन्त ६ हल्ल ७ द्रुम ८ द्रुमसेन
९ महाद्रुमसेन १० सिंह ११ सिंहसेन १२ महासिंहसेन तथा १३ पुण्यसेन.

इस तरह तेरह कुमारों के नामसे १३ अध्ययन विख्यात हैं.

* पहिला अध्ययन *

(दीर्घसेन)

मूल— जति णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अणुत्तरोववाइयदसाणं दोच्चस्स वग्गस्स तेरस अज्झ-यणा पन्नत्ता, दोच्चस्स णं भंते ! वग्गस्स पढमज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते ? एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णगरे गुणासिलते चेतिते सेणिए राया धारिणीदेवी सीहो सुमिणे जहा जाली तहा जम्मं वालत्तणं कलातो, नवरं दीहसेणे कुमारे सच्चेव वत्तव्वया जहा जालिस्स जाव अंतं काहिती ।

भावार्थ— जम्बू स्वामी ने पुनः प्रश्न किया– हे भगवन्त ! यदि श्रमण भगवन्त यावत् मोक्ष को पधारे ने अनुत्तरोपपातिकदशा के दूसरे वर्ग के तेरह अध्ययन बताये हैं तो हे पूज्य ! दूसरे वर्ग के पहिले अध्ययन का श्रमण भगवन्त महावीर देव यावत् मोक्ष को पधारे ने क्या बयान फरमाया है ? सुधर्म स्वामी उत्तर देते हैं– इस कदर निश्चय करके हे जम्बो ! उस काल उस समय में राजगृही नाम का नगर था, उसके बाहर गुणशील नामक उद्यान था, वहां पर महाराजा श्रेणिक राज्य करते थे, उनकी धारिणी संज्ञिका पटरानी थी, उसने एक वक्त स्वप्न

में सिंह देखा; जाली कुमार के समान जन्म – बाल्यावस्था कलाग्रहणादि जानना, विशेषता यह थी कि उनका नाम 'दीर्घसेन' था, दीक्षा वगैरः सर्व अधिकार जाली कुमारवत् समझना यावत् देवलोक से च्यवकर महाविदेह क्षेत्र में मोक्षपद प्राप्त करेंगे।

॥ दूसरा अध्ययन यावत् तेरहवां अध्ययन ॥

(महासेन यावत् पुण्यसेन)

बारह कुमारों का संक्षेप वृत्तान्त

मूल— एवं तेरस वि रायगिहे सेणिओ पिता धारिणी माता तेरसण्हवि सोलसवासा परियातो आणुपुव्वीए विजए दोन्नि वेजयन्ते दोन्नी जयन्ते दोन्नी अपराजिते दोन्नी, सेसा महादुमसेणमाती पंच

सव्वट्ठसिद्धे, एवं खलु जम्बू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अणुत्तरोववाइयदसाणं दोच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, मासियाए संलेहणाए दोसुवि वग्गेसु. (सूत्रं २)

भावार्थ— इस ही प्रकार तेरह कुमारों के अध्ययन कहना – राजगृही नगर, श्रेणिक पिता, धारिणी माता वगैरः सब कुमारों के लिये जानना. तेरह ही कुमारों ने सोलह २ वर्ष पर्यन्त चारित्र पर्याय पालन किया, अन्त में अनशन तप धारण कर मरण–शरण होकर अनुक्रम से दो कुमार विजय विमान में – दो कुमार विजयंत विमान में – दो कुमार जयन्त विमान में – दो कुमार अपराजित विमान में उत्पन्न हुवे; बाकी के महाद्रुमसेन आदि पाँच कुमार सर्वार्थसिद्ध विमान में उत्पन्न हुवे – सुधर्म स्वामी ने फरमाया – हे जम्बो ! निश्चय इस तरह श्रमण भगवन्त महावीर देव ने अणुत्तरोपपातिकदशा के दूसरे वर्ग का यह बयान किया – दोनों वर्ग के उत्तम पुरुषों का संलेखना तप एक २ मास का समझ लेना. (सूत्र २) दूसरे वर्ग का भावार्थ सम्पूर्ण हुवा.

उपसंहार

इस दूसरे वर्ग में तेरह उत्तम पुरुषों की उज्ज्वल तपश्चर्या का संक्षिप्त बयान है, तप बिना खान–पानादि

की आसक्ति मिट नहीं सकती और सबसे अधिक दुस्त्याज्य भोजनासक्ति ही है; इस वास्ते आत्महितार्थ तपश्चर्या अवश्य करनी चाहिये.

दूसरा अध्ययन यावत् तेरहवां अध्ययन मूल और भावार्थ सहित सम्पूर्ण.

❀ दूसरा वर्ग समाप्त ❀

तृतीय वर्ग

(प्राक्कथन)

मूल— जति णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अणुत्तरोववाइयदसाणं दोच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पन्नत्ते, तच्चस्स णं भंते ! वग्गस्स अणुत्तरोववाइयदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते ? एवं खलु जम्बू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अणुत्तरोववाइयदसाणं तच्चस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पन्नत्ता; तंजहा—

धण्णे य सुणक्खत्ते । इसिदासे अ आहिते ॥ पेल्लए रामपुत्ते य । चंदिमा पिट्ठिमाइया ॥ १ ॥
पेढालपुत्ते अणगारे । नवमे पुट्टिले इ य ॥ वेहल्ले दसमे वुत्ते । इमे ते दस आहिते ॥ २ ॥

भावार्थ— भगवान् सुधर्म गणधर को जम्बू अनगार विनय पूर्वक पूछते हैं– हे पूज्य गुरुदेव ! श्रमण भगवन्त महावीर देव यावत् मोक्ष को पधारे ने अनुत्तरोपपातिकदशा के द्वीतीय वर्ग का यह (उपरोक्त) बयान फरमाया तो हे प्रभो ! अणुत्तरोपपातिकदशा के तीसरे वर्ग का श्रमण भगवन्त यावत् मोक्ष को पधारे ने क्या अर्थ प्रकाशित किया ? इस पर सुधर्म स्वामी फरमाते हैं– निश्चय इस प्रकार हे जम्बो ! श्रमण भगवन्त यावत् मोक्ष को पधारे ने अणुत्तरोपपातिकदशा के तीसरे वर्ग के दस अध्ययन जाहिर किये हैं; वे ये हैं—

१ धन्यकुमार २ सुनक्षत्र कुमार ३ ऋषिदास कुमार ४ पेल्लक कुमार ५ रामपुत्र कुमार
६ चन्द्र कुमार ७ पृष्ट कुमार ८ पेढाल पुत्र अनगार ९ पोट्टिल कुमार १० वेहल्ल कुमार.

इन दस कुमारों के नाम से दस अध्ययन कहे जाते हैं.

❀ पहिला अध्ययन ❀

(धन्य कुमार)



धन्य कुमार का गृहस्थाश्रम

मूल— जति णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अणुत्तरोववाइयदसाणं तच्चस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पन्नत्ता, पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पन्नत्ते ? एवं खलु जम्बू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं कागंदी णाम णगरी होत्था रिद्धत्थिमियसमिद्धा सहसंवणे उज्जाणे सव्वोदुए जिअसत्तू राया, तत्थ णं कागंदीए णगरीए भद्दा णामं सत्थवाही परिवसइ अड्ढा जाव अपरिभूआ, तीसे णं भद्दाए सत्थवाहीए पुत्ते धन्ने नामं दारए होत्था अहीण जाव सुरूवे पंच धातीपरिग्गहिते तंजहा– खीर धाती जहा

महब्बले जाव बावत्तरिं कलातो अहीए जाव अलं भोगसमत्थे जाते यावि होत्था, तते णं सा भद्दा सत्थ-वाही धन्नं दारयं उम्मुक्कबालभावं जाव भोगसमत्थं यावि जाणेत्ता बत्तीसं पासायवर्डिसते कारेति अब्भु-ग्गतमूसिते जाव तेसिं मज्झे भवणं अणेगखंभसयसन्निविट्ठं जाव बत्तिसाए इब्भवरकन्नगाणं एगादिवसेणं पाणिं गेण्हावेति २ त्ता बत्तीसओ दाओ जाव उप्पिंपासायवर्डिसते फुट्टेतेहिं जाव विहराति ।

भावार्थ— जम्बू स्वामी गुरु महाराज से पूछते हैं – हे पूज्यवर्य्य ! श्रमण भगवन्त महावीर देव यावत् मोक्ष को पधारे ने जो तीसरे वर्ग के दस अध्ययन प्रदर्शित किये हैं तो हे भगवन ! पहिले अध्ययन का श्रमण भगवन्त यावत् मोक्ष को पधारे ने क्या अर्थ प्रकाशित किया ? इस पर सुधर्म स्वामी फरमाते हैं – हे जम्बू ! निश्चय इस प्रकार चतुर्थ काल में (चौथे आरे में) आख्यान प्रसङ्ग के समय में काकंदी नामकी ऋद्धिपूर्णा – निर्भया और समृद्धिशालिनी एक नगरी थी, उसके बाहर सहस्राम्रवन (हज़ार आम के वृक्षों वाला वन) नामक उद्यान (नगर के समीप का जंगल) था, वह सर्व ऋतुओं में फल – फूल से सुशोभित था, उस काकंदी नगरी में जित-शत्रु नामका राजा राज्य शासन पर विराजित था, उस काकंदी नगरी में भद्रा नामकी सार्थवाहिनी रहती थी, वह ऋद्धिमति थी यावत् अन्य से अपरास्त (पराभव नहीं होने वाली) थी, उस भद्रा सार्थवाहिनी के धन्य-

कुमार नामका पुत्र था, अहीन यानी पूर्ण पंचेन्द्री शरीर वाला यावत् स्वरूपवान् था, पाँच धाय माताओं से इस का पालन पोषण होता था, वे धाय माताएँ ये हैं – १ दूध पिलाने वाली यानी स्तन पान कराने वाली २ स्नान कराने वाली ३ वस्त्र-भूषण पहनाने वाली ४ गोद मे लेकर फिराने वाली ५ क्रीड़ा कराने वाली, इत्यादि महाबल कुमार के माफिक जानना, यावत् धन्यकुमार बहत्तर कला कुशल हुवा यावत् पूर्ण भोग समर्थ हुवा यानी युवा अवस्था को प्राप्त हुवा; तत्पश्चात् उस भद्रा सार्थवाहिनी ने धन्य कुमार को मुक्तबालभाव यावत् भोग समर्थ जानकर बत्तीस प्रासादावतंसक (सुन्दर महल) तैयार कराये, वे बहुत ऊँचे थे, उनके बीचों बीच हजारों स्तम्भ से शोभित एक सुन्दर भवन * कराया; यावत् श्रीमन्तों की श्रेष्ठ बत्तीस कन्याओं के साथ एक दिनमें विवाह कराया, कराकर बत्तीस २ दास-दासी वगैरः का दायजा दिया, यावत् वह धन्य कुमार बत्तीस ललनाओं के साथ महलों के ऊपर नाच–गान वाजिन्त्रों सहित यावत् वैषयिक सुख (सांसारिक सुख) में लीन होकर रहने लगा

* प्रासाद स्त्रियों के लिये और भुवन कुमार के लिये बनाया गया था , प्रासाद और भुवन की बिल्डिंग (इमारत) का अन्तर हमारा बनाया हुआ विपाक सूत्र के हिन्दी अनुवाद में पृष्ठ ३२५ के टीकार्थ में खुलासा किया है, वहां से जान लेना.



प्रभु का पदार्पण – धन्य कुमार वैराग्य रंगरंगित – भागवती दीक्षा का ग्रहण

मूल— तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसढे, परिसा निग्गया राया जहा कोणितो तहा जियसत्तु णिग्गतो, तते णं तस्स धन्नस्स तं महता जहा जमाली तहा णिग्गतो, नवरं पाय–चारेणं जाव जं नवरं अम्मयं भद्दं सत्थवाहिं आपुच्छामि, तते णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतिते जाव पव्व–यामि जाव जहा जमाली तहा आपुच्छइ मुच्छिया वुत्तपडिवुत्तया जहा महब्बले जाव जाहे णो संचाएति जहा थावच्चापुत्तो जियसत्तुं आपुच्छति छत्तचामरातो सयमेव जियसत्तु णिक्खमणं करेति जहा थावच्चा पुतस्स कण्हो जाव पव्वतिते अणगारे जाते इरियासमिते जाव बंभयारी ।

भावार्थ— उस काल उस समय में श्रमण भगवन्त महावीर देव समवसरे, नगरी से प्रजा पर्षदा प्रभु के

दर्शनार्थ निकली, कोणिक राजा की तरह महदाडम्बर से जितशत्रु राजा भी प्रभु के दर्शनार्थ घरसे निकला तदन्तर उस धन्य कुमार ने नागरिकों के कोलाहल से प्रभु का पदार्पण जाना, तब यह जमाली की तरह दर्शनार्थ रवाना हुवा, विशेषता यह थी कि कुमार पैर पैदल वंदनार्थ गया, यावत् परमात्मा की देशना सुनकर वैराग्य रंग रंगित हुवा, विशिष्ट बात यह है कि धन्य कुमार ने प्रभु से प्रार्थना की कि मैं मेरी माता भद्रासार्थ-वाहिनी से आज्ञा प्राप्त कर बाद आप प्रभु के पास यावत् मैं भवतापहारिणी दीक्षा अङ्गीकार करूंगा ! ऐसा निवेदन कर यावत् घर पर जाकर जमाली की तरह माता से आज्ञा मांगी, सुनते ही मोहग्रथिल माता मूर्छित होगई, सावधान होने पर माता – पुत्र के परस्पर युक्ति – प्रत्युक्ति रूप सुन्दर संवाद हुवा; अर्थात् माता ने दीक्षा निषेध का पक्ष सिद्ध करने का प्रयत्न किया और पुत्र ने दीक्षा समर्थन का पक्ष सिद्ध करने का प्रयास किया, श्री भगवती सूत्र में कथित महाबल की तरह माता – पुत्र के प्रश्नोत्तर जान लेना यावत् (आखीर) जब माता पुत्र को समझाने में असक्त हुई तब थावचा पुत्र के समान (ज्ञाताधर्मकथा के पाँचवें अध्ययन में कथित धन्य कुमार की माताने जितशत्रु राजा के पास से अपने पुत्र के दीक्षा महोत्सव के लिये छत्र-चामरादि की याचना की, तब जिस तरह थावचा पुत्र का दीक्षा महोत्सव श्री कृष्ण ने किया था उस ही तरह जितशत्रु राजा ने धन्य कुमार का स्वयं दीक्षा महोत्सव किया, यावत् कुमार अनगार पद को प्राप्त हुवे, इर्यासमिति आदि में

उपयोगवन्त होते हुवे यावत् गुप्तब्रह्मचारी यानी ब्रह्मचर्य की नौवाड़ * पालने वाले हुवे.

तपश्चर्या के लिये उग्र प्रतिज्ञ धन्य अनगार की प्रार्थना – भगवन्त का आदेश

मूल— तते णं से धन्ने अणगारे जं चेव दिवसं मुंडे भवित्ता जाव पव्वतिते तं चेव दिवसं समणं भगवं महावीरं वंदति णमंसति वंदित्ता णमंसित्ता एव वयासी – इच्छामि णं भंते ! तुब्भेणं अब्भणुण्णाते समाणे जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं आयंबिलपरिग्गाहिएणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणे विह– रित्तते छट्ठस्स वि य णं पारणयंसि कप्पति आयंबिलं पडिग्गाहित्तते नो चेव णं अणायंबिलं तं पि य संसट्ठं णो चेव णं असंसट्ठं तं पि य णं उज्झिय धम्मियं नो चेव णं अणुज्झिय धम्मियं तं पि य जं अन्ने वहवे समणमाहणअतिहिकिवणवणीमगाणवकंखंति, अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह ।

* ब्रह्मचर्य की नौवाड़ का बयान हमारे बनाये हुवे 'सुखचारित्र' से जान लेना

भावार्थ— पारमेश्वरी प्रव्रज्या ग्रहण करने के पश्चात् उस धन्य (धन्ना) अनगार ने जिस दिन मुंडित होकर दीक्षा ली उस ही दिन श्रमण भगवन्त महावीर देव को वंदन – नमस्कार किया, करके इस प्रकार प्रार्थना की – हे प्रभो ! आपकी आज्ञा प्राप्त करके जीवन पर्यन्त छट २ यानी बेले २ की तपस्या कर पारणे में आयँबिल ❀ तप द्वारा मैं आत्म भावना भाता हुवा विचरूं ! ऐसी मेरी इच्छा है; अर्थात् छट के पारणे भी आयँबिल (शुद्ध चावलादि) करना कल्पे; परन्तु आयँबिल बिना की कोई वस्तु लेना कल्पे नहीं, वह आयँबिल की वस्तु भी संसृष्ट हो (खरड़े हुवे हाथ वगैरः से जो वस्तु दी जाय) वही कल्पे, किन्तु असंसृष्ट कल्पे नहीं, व संसृष्ट आहार भी उज्झित धर्मवाला (गृहस्थों के खाने बाद बचा बचाया फैंक देने के लायक) आहार कल्पे, मगर अनुज्झित आहार कल्पे नहीं, उज्झित होने पर भी जिस आहार को श्रमण – माहण – अतिथि – कृपण – वनीपक (साधु ब्राह्मण – पाहुना – कंजूस – भिखारी) इच्छते न हों वह आहार बहेरना कल्पे; इस कदर तपस्या करने की आज्ञा बक्षो ! ज्ञानवन्त प्रभु ने फरमाया – हे देवों के प्यारे ! तुझे सुख हो वैसा कर, इस में विलम्ब मत कर–यह तेरे लिये श्रेयस्कर है.

❀ आयँबिल में मात्र एक प्रकार का अनाज व दूसरा आचित्त जल, ये दो द्रव्य ग्रहण करना उचित है, कारण कि यह तप सर्व रसों से मुक्त रहने को ही किया जाता है

धन्य अनगार का घोर तप

मूल— तते णं से धन्ने अणगारे समणेणं भगवता महावीरेणं अब्भणुन्नाते समाणे हट्ठ तुट्ठ जाव-जीवाए छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणे विहरति, तते णं से धन्ने अणगारे पढम छट्ठक्खमणपारणगंसि पढमाए पोरसीए सज्झायं करेति जहा गोतम सामी तहेव आपुच्छति जाव जेणेव काकंदी णगरी तेणेव उवागच्छति २ त्ता काकंदी णगरीए उच्चनीय जाव अडमाणे आयंविलं जाव णावकंखति।

भावार्थ— तत्पश्चात् वे धन्य अनगार श्रमण भगवन्त महावीर देव की आज्ञा प्राप्त होने पर हर्षित-तुष्टित होकर जीवन पर्यन्त निरन्तर छट २ की यानी बेले २ की तपस्या करते हुवे आत्म भावना में विचरते हैं. प्रारम्भ में धन्य अनगार ने पहिले छट क्षमण के पारणे गौतमस्वामी की तरह पाहिली पोरसी में स्वाध्याय, दूसरी पोरसी मे ध्यान (सूत्रार्थ चिन्तन) तीसरी पोरसी मे मुंहपत्ति – वस्त्र – पात्रादि का प्रतिलेखन करके पारणे के लिये प्रभु की आज्ञा लेकर यावत् जहां पर काकन्दी नगरी है वहां पर पधारते हैं, पधार कर क्षत्री वगैरः उँच

कुल में कृपणादि नीच कुल में वणिकादि मध्यम कुल में यावत् भ्रमण करते हुवे आयँबिल के लिये रूक्ष और नीरस आहार ग्रहण किया.

धन्य अनगार की आदर्श गौचरी.

मूल— ततेणं से धन्ने अणगारे ताए अब्भुज्जताए पययाए पयत्ताए पग्गहियाए एसणाए जति भत्तं लभति तो पाणं ण लभति अह पाणं तो भत्तं न लभति, ततेणं से धन्ने अणगारे अदीणे अविमणे अकलुसे अविसादि अपरितंतजोगी जयणघडणजोगचरित्ते अहा पज्जत्तं समुदाणं पडिगाहेति पडिगाहित्ता काकंदीओ णगरीतो पडिणिक्खमति जहा गोतमे जाव पडिदंसेति, ततेणं से धन्ने अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुन्नाते समाणे अमुच्छिते जाव अणज्झोववन्ने बिलमिवपण्णगभूतेणं अप्पाणेणं आहारं आहारेति आहारित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति ।

भावार्थ— धन्य अनगार की गौचरी की स्थिति बयान करते हुवे सुधर्म स्वामी फरमाते हैं— तदन्तर वह धन्य अनगार जिस तरह सुविहित साधु ऐषणा की गवेषणा करते हैं उस तरह की तथा प्रयत्नवाली, गुरु महाराज की आज्ञा वाली और खुदने अच्छी तरह ग्रहण की हुई ऐसी एषणा से (निर्दोषता से) यदि आहार मिले तो पानी नहीं मिले और पानी मिले तो आहार नहीं मिले; अर्थात् कष्ट पूर्वक आहार - पानी ग्रहण करके पश्चात् वह धन्य अनगार दीनता रहित यानी दीनाकृति रहित, शून्य मन रहित, क्रोधादिक की कलुषता रहित, विषाद (खेद) रहित, श्रमरहित, समाधिवाले, प्राप्तयोग के अन्दर उद्यम और अप्राप्त योग में प्रयत्न; ऐसे यतन और घटन (उद्यम और प्रयत्न) की मुख्यता वाले योग पूर्ण (विचार - वाणी - वर्तन पूर्ण) चारित्र वाले धन्य कुमार ने यथा प्राप्त आहार - पानी ग्रहण किया, करके काकंदी नगरी से बाहार निकले और यावत् गौतम स्वामी की तरह भगवन्त को आहार - पानी बताया; तदन्तर धन्य कुमार ने भगवन्त की आज्ञा प्राप्त कर अनासक्त (मूर्छा रहित) होकर, लुब्धता रहित होकर ' बिलपन्नगवत् ' यानी जैसे सर्प आस पास स्पर्श नहीं करता हुवा बिल में प्रवेश करता है वैसे ही मुख में आस पास नहीं फिराते हुवे आहार उतार जाते हैं * मतलब कि राग रहित होने से इस प्रकार आहार करते हैं, करके संयम - तप से आत्म भावना करते हुवे धन्य अनगार विचरते हैं - रहते हैं. ॥ ३१ ॥

* इसका विशेष खुलासा हमारा अनुवादित ' विपाक सूत्र ' के पृष्ट २३३ के फुटनोट से जान लेना.

धन्य अनगार का शास्त्राभ्यास

मूल— समणे भगवं महावीरे अण्णया कयाइ काकंदीए णगरीतो सहसंबवणातो उज्जाणातो पडि-णिक्खमति २ त्ता बहिया जणवयविहारं विहरति, तते णं से धन्ने अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिते सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जति संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति ।

भावार्थ— कितनेक समय के बाद श्रमण भगवान् महावीर देव ने काकंदी नगरी के सहस्राम्रवन नामक उद्यान से विहार किया, करके बाहार देशों में विचरने लगे, तब वह धन्य अनगार श्रमण भगवन्त महावीर देव के तथारूप स्थविर मुनि के पास सामायिक आदि * ग्यारह अङ्ग का अभ्यास किया और संयम-तप द्वारा आत्म भावना करते हुवे विचरते हैं.

* इसका खुलासा हमारे हिन्दी अनुवादित 'विपाक सूत्र' के पृष्ट २५९ की टिप्पणी से मालूम कर लेना.

दिव्य तपश्चर्या से धन्य अनगार के शरीर की अवर्णनीय शोभा

मूल— ततें णं से धन्ने अणगारे तेणं ओरालेणं जहा खदतो जाव सुहुयहुयासणे इव तेयसा जलंते उवसोभेमाणे चिट्ठति ।

भावार्थ— तत्पश्चात् वह धन्य अनगार उदार तप से स्कन्दक मुनि के मुआफिक यावत् अच्छी तरह घी से होमी हुई अग्नि की तरह तप तेज से देदिप्यमान् होकर अत्यन्त शोभते हुवे विचरने लगे– अब क्रमशः तपोधन धन्य अनगार की शारीरिक परिस्थिती दिखलाते हैं:—

मूल— धन्नस्स णं अणगारस्स पादाणं अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते सुक्कछल्लीति वा कट्ठपाउयाति वा जरग्गओवाहणाति वा, एवामेव धन्नस्स अणगारस्स पाया सुक्का णिम्मंसा अट्ठिचम्मछिरत्ताए पण्णायंति णो चेव ण मंससोणियत्ताए, धन्नस्स णं अणगारस्स पायंगुलियाणं अयमेया–

रूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते कलसंगलियाति वा मुग्गसंगलियाति वा मांससंगलियाति वा तरुणिया छिन्ना उण्हे दिन्ना सुक्का समाणी मिलायमाणी मिलायमाणी चिट्ठति, एवामेव धन्नस्स पायंगुलियातो सुक्कातो जाव सोणियत्ताते ।

भावार्थ— तपस्या के प्रभाव से धन्य अनगार के पैर की आकृति का ऐसा सौन्दर्य ❀ था कि जिस तरह सूखी हुई छाल या काष्ट पादुका (पावड़ी) अथवा पुराना जूता हो उस तरह उन महात्मा के पैर शुष्क मांस रहित यानी मात्र हड्डियाँ - चमड़ी तथा नसें रहजाने से पैर हैं ऐसा मालूम होता था; परन्तु मांस रुधिर की क्षीणता से उनका सद्भाव नहीं दिखाई देता था - तपस्या के प्रभाव से धन्य अनगार की पैर की अंगुलियों का सौंदर्य इस प्रकार था कि जिस तरह तुवर की फली - मूंग की फली अथवा उड़द की फली कोमल अवस्था में छेदकर उसको सुखाई गई हो और वह सूख जाने पर करमा गई हो, अत्यन्त करमा गई हो वैसी मांस - रुधिर रहित अति शुष्क सलवाली धन्य अनगार की अंगुलियां दिखाई देती थीं.

❀ तपस्या से रूप की सुन्दरता दिखाई नहीं देती, प्रत्युत्तर सुन्दर हीनता देखने में आती है, परन्तु यहां पर सर्वंग भाव से सादृश माना गया है

मूल— धन्नस्स अणगारस्स जंघाणं अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते काकजंघात्ति वा कक जंघाति वा ढेणियालेयाजंघानि वा जाव णो सोणियत्ताए – धन्नस्स अणगारस्स जाणूणं अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते कालीपोरेति वा मयूरपोरेति वा ढेणियालियापोरेति वा एवं जाव सोणियत्ताए – धन्नस्स अणगारस्स उरुस्स अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते सामकरेल्लेति वा बोरीकरीलेति वा सल्लतिकरीलेति वा सामलीकरिल्लेति वा तरुणिते उण्हे जाव चिट्ठति, एवामेव धन्नस्स अणगारस्स उरू जाव सोणियत्ताए – धन्नस्स अणगारस्स कडियत्तस्स इमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते उट्टपादेति वा जरग्गपादेति वा (महिसपादेति वा) जाव सोणियत्ताए।

भावार्थ— तपस्या के प्रताप से धन्य अनगार की पिंडियों का ऐसा सौंदर्य बना था जैसा काकजंघा नाम की वनस्पति जिस की नसे दिखाती हों और संधी का भाग मोटा (जाडा) हो, अथवा कागले की जंघा (पिन्डी) कंक पक्षी की जंघा, ढेणिकालिक नामक पक्षी की जंघा जो स्वाभाविक ही मांस – रुधिर रहित होती है, उसके समान धन्य अनगार की पिंडियाँ मांस – रुधिर रहित ज्ञात होती थीं— तपस्या के कारण धन्य अनगार के घुटनों का (गोडों का) सौंदर्य इस प्रकार था जैसे काकजंघा नामक वनस्पति की गांठ, मोर की जंघा का पर्व (घुटने की

गांठ) ढेणिकालिक पक्षी का पर्व अथवा ढेणिकालिक यानी तीड़ की जंघा का पर्व हो उस मुआफिक उनके घुटने शुष्क और कठिन होगये थे, यावत् मांस - रुधिर युक्त नजर नहीं आते थे - तपस्या के प्रभाव से धन्य अनगार की सांथल ऐसी खूबसूरत थी कि जैसे प्रियंगु वृक्ष की नवीन शाखा, बोरड़ी की नवीन शाखा, शल्ल दरख्त की नई डाली, शाल्मली रूंख की नूतन शाखा हो और उनको धूप में रखकर सुखाई गई हों वे जैसी निसत्व हो जाती हैं वैसी धन्य अनगार की सांथल मांस - रुधिर रहित शुष्क दिखाई देती थी - तपस्या के प्रताप से धन्य अनगार का कटिप्रदेश (कमर) की सुन्दरता ऐसी नज़र आती थी जैसे ऊँट का पग, बुड्ढे बैल का पग, (अथवा भैंस का पग) हो वैसे मांस - रुधिर सहित उनकी कमर मालूम नहीं होती थी - " यहां पर पत्र शब्द से पतलापन और सर्गादि वृक्ष के पत्ते से दो दलपना जानना; पाठान्तर से कमररूप पट्ट भी कहा है एवं कमर को ऊँट वगैरा के पग की उपमा दी गई है उसका मतलब यह है कि ऊँट वगैरा के पग के दो विभाग होते हैं और नीचे से अति पतले होते हैं इससे उनके गुदा प्रदेश की साम्यता होती है. "

मूल— धन्नस्स अणगारस्स उदरभायणस्स इमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा नामते सुक्कदिएति वा भज्जणयकभल्लेति वा कट्ठकोलंबएति वा, एवामेव उदरं सुक्कं - धन्नस्स अणगारस्स पांसुलियकडयाणं इमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते थासयावलीति वा पाणावलीति वा मुंडावलीति वा ।

भावार्थ— तपस्या से धन्य अनगार के उदर रूप भाजन (पेट रूप पात्र) का ऐसा सौंदर्य था जैसे सूखी हुई चमड़े की मसक (सब जगह जिसके सल पड़े होते हैं) चने बगैरा भुजने का ढीव (ढीव ऊँडा होता है) वृक्ष की शाखा का झुका हुवा अग्रभाग, अथवा काष्ट की कथरोट (लकड़ी की परात) हो इस मुआफिक उनका उदर ऊंडा, सलवाला, नमा हुवा और पतला शुष्क – रूक्ष – मांस रहित दिखाई देता था – तपस्या के हेतु से धन्य अनगार की पांसलियों के मंडल का ऐसा सौंदर्य था कि जिस तरह स्थासकावली, पाणावली, मुंडावली हो (स्फुरकादि के विपे दर्पण की आकृति वाले स्थासक कहलाते हैं उसके उपराउपर जो श्रेणी वह स्थासकावली अर्थात् देव मदिर के ऊपर स्थित आमलसार जैसी आकृति. गोलाकार भाजन की श्रेणी पाणावली कहलाती है, भैंसों के बाड़े में परिघ यानी लोहे की लकड़ी रक्खी जाती है उसे मुंडावली कहते हैं – टब्बार्थ में ऐसा अर्थ है— बांस का करंडिया, बांस की टोकरी, बांस का टोकरा) उस तरह पांसलियों की श्रेणी दिखाई देती थी.

मूल— धन्नस्स अणगारस्स पिट्ठिकरंडयाणं अयमवोरूवे तवरूव लावण्णे होत्था, से जहा णामते रूवे कन्नावलीति वा गोलावलीति वा वट्टयावलीति वा, एवामेव० – धन्नस्स अणगारस्स उरकडयस्स अयमेयारूवे तवरूव लावण्णे होत्था, से जहा णामते चित्तकट्टरेति वा वियणपत्तेति वा तालियंटपत्तेति वा, एवामेव० ।

भावार्थ— तपके प्रभाव से धन्य अनगार के पीठ करण्डक (पीठ का उठा हुवा प्रदेश) ऐसा दिखनेता था जैसे कर्णावली, गोलावली और वर्तकावली हो (मुकुट की श्रेणी, गोल पत्थर की श्रेणी, लाख वगैरः के बनाये हुवे बालक के खिलौने हो) वैसे पीठ करण्डक मालूम होता था – तपस्या से बना हुवा धन्य अनगार का वक्षस्थल (छाती) की ऐसी सुन्दरता थी जैसे चित्त नामक वृक्ष की बनी हुई चटाई, पवन डालने को बांस का बनाया हुवा पंखा, ताड़ के पत्तो का बनाया हुवा पंखा हो वैसा उनका वक्षस्थल पतला होगया था.

मूल— धन्नस्स अणगारस्स बाहाणं अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते समिसंगलियाति वा बाहायासंगलियाति वा अगत्थियसगंलियाति वा एवामेव० – धन्नस्स अणगारस्स हत्थाणं अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते सुक्कछगणियाति वा वडपत्तेति वा पलासपत्तेति वा, एवामेव०

भावार्थ— तप के प्रताप से धन्य अनगार के भुजा का इस प्रकार सौंदर्य था जिस तरह खजड़े की फली बाहाया वृक्ष की फली अथवा अगथिया वृक्ष की फली हो उसी तरह धन्य अनगार की भुजा पतली और लम्बी दिखाई देती थी – तपश्चर्या के प्रभाव से धन्य अनगार का हाथ (पंजा) का सौंदर्य ऐसा था कि जैसे सूखा हुवा छाणा (छाना) बड़ का पत्ता वा खांखरे का पत्र हो वैसा शुष्क हाथ नजर आता था.

मूल— धन्नस्स अणगारस्स हत्थंगुलियाणं अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते कलायसंगलियाति वा मुग्गसंगलियाति वा माससंगलियाति वा तरुणियाछिन्ना आयवे दिन्ना सुक्का समाणी, एवामेव० – धन्नस्स अणगारस्स गीवाए अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते करगगीवाति वा कुंडियागीवाति वा उच्चट्ठवणतेति वा, एवामेव० ।

भावार्थ— तपश्चर्या के कारण धन्य अनगार की हस्तांगुलियों की मनोहरता इस प्रकार थी जैसे तुवर की फली, मूंग की फली अथवा उड़द की कोमल फली काटकर धूप में सुखाई गई हो, उस तरह धन्य अनगार के हाथ की अंगुलियां मालूम होती थीं–तप की वज़ह धन्य अनगार की ग्रीवा (गरदन) की शोभा ऐसी थी जैसे घड़ेका गला, कमण्डलु का गला अथवा ऊँचे मुँहवाली कोथली जैसी कमजोर हो वैसी उनकी ग्रीवा थी.

मूल— धन्नस्स अणगारस्स हणुआए अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते लाउयफलेति वा हकुवफलेति वा अंवगट्ठियाति वा, एवामेव० – धन्नस्स अणगारस्स उट्ठाणं अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते सुक्कज्जलोयाति वा सिलेसगुलियाति वा अलत्तगगुलियाति वा, एवामेव०

भावार्थ— धन्य अनगार की दाढी का तपश्चर्या के प्रभाव से ऐसा सौन्दर्य था जैसे तुम्बे का फल, हकुवी (वनस्पति विशेष) का फल अथवा आम की गुठली धूप में सूखी हुई हो वैसी उनकी डाढी थी – धन्य अनगार के होठ का तपके प्रताप से ऐसा सौंदर्य था जैसे सूखी जलोख (जल का दो इन्द्री वाला जीव) कफ की सूखी गोली अथवा लाख की सूखी गोली हो वैसा धन्य अनगार का सुकड़ा हुवा और निस्तेज होठ था.

मूल— धन्नस्स अणगारस्स जिब्भाए अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते वडपत्ते इवा पलासपत्तेइ वा सागपत्तेइ वा, एवामेव० – धन्नस्स अणगारस्स नासाए अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते अंबगपेसियाति वा अंबाडगपेसियाति वा मातुलुंगपेसियाति वा तरुणिया, एवामेव०

भावार्थ— धन्य अनगार की जबान की तपस्या के कारण ऐसी सुन्दरता होगई थी जैसे वड़का पत्ता, खांखरे का पत्ता या साग का पत्ता हो वैसी जबान मुह मे हिलहिलती थी – धन्य अनगार की नासिका (नाक) का तप के हेतु ऐसा मनोरम्य था जैसे केरी की पेशी (टुकड़ा) अंबालक फल की पेशी हो अथवा बीजोरे की पेशी हो वैसी उनकी कोमल (निःसत्व) नासिका थी.

मूल— धन्नस्स अणगारस्स अच्छीणं अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते वीणा–

छिड्डेति वा वद्धीसगछिड्डुति वा पाभातियतारिगाइ वा, एवामेव० – धन्नस्स अणगारस्स कण्णाणं अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते मूलाछल्लियाति वा वालुकच्छल्लियाति वा कारेल्लयच्छल्लियाति वा, एवामेव० ।

भावार्थ— धन्य अनगार के नेत्र की तपश्चर्या के प्रभाव से ऐसी सुन्दरता थी जैसे वीणा के छिद्र, वद्धीसक (एक जाति का वाजिन्त्र) के छिद्र या प्रभात कालके सितारे हों वैसे ऊंडे और तेजोहीन नेत्र थे – धन्य अनगार के कान की तप के कारण ऐसी मनोरमता थी जैसे मूले की छाल, ककड़ी की छाल वा कारेले की छाल हो वैसे उस धन्य अनगार के पतले कान थे.

मूल— धन्नस्स अणगारस्स सीसस्स अयमेयारूवे तवरूवलावण्णे होत्था, से जहा णामते तरुणगलाउएति वा तरुणगएलालुयत्ति वा सिण्हालएति वा तरुणए जाव चिट्ठति, एवामेव० – धन्नस्स अणगारस्स सीसं सुक्कं लुक्खं णिम्मंसं अट्ठिचम्माच्छिरत्ताए पन्नायति, नो चेवणं मंस सोणियत्ताए एवं सव्वत्थ, णवरं उदरभायणकन्नंजीहाउट्ठा एएसिं अट्ठी ण भन्नाति चम्माच्छिरत्ताए पण्णायइत्ति भन्नाति ।

भावार्थ— तपश्चर्या के प्रभाव से धन्य अनगार के मस्तक का ऐसा सौंदर्य था जैसे कोमल तुम्बा, कोमल आलू का फल (कन्दविशेष - यह अनेक प्रकार का होता है, मगर विशेष काम में आता हुवा जान कर इसका नाम दिया) अथवा कोमल सिस्तालक यानी सेफालक (संभवतः सीताफल) लोक प्रसिद्ध फल, यावत् शब्द से इन कोमल फलों को काटकर धूप में सुखाये हों उससे शुष्क और सुकड़े हुवे हों वैसा धन्य अनगार का मस्तक शुष्क, रूक्ष, मांस रहित था, मात्र हड्डियां, चमड़ी और नसों से मस्तक है ऐसा मालूम होता था; परन्तु " मांस रुधिर उसमें नजर नहीं आता था, " यह आलाप प्रत्येक अंग के वर्णन में जानना; विशेष यह है कि उदररूपी भाजन, कान, जबान और होठ के वर्णन में ' अस्थि ' यानी हड्डी शब्द नहीं कहना, मगर मात्र चर्म और नसों मे ही दिखाई देता है, ऐसा कहना चाहिये - इस तरह पैर से लेकर मस्तक तक धन्य अनगार के शरीर की सुंदरता का वर्णन किया.

अथ पुनः दूसरी तरह धन्य अनगार मुनिसत्तम के शरीर का वर्णन करते हैं—

धन्य अनगार तपस्वी के शरीर का रूपान्तर से वर्णन

मूल— धन्ने णं अणगारे णं सुक्केणं भुक्खेणं पातजंघोरुणा विगत तडिकरालेणं कडिकडाहेणं, पिट्ठमविस्सिएणं उदरभायणेणं, जोइज्जमाणेहिं पांसुलिकडएहिं अक्खसुत्तमालाति वा [गणिज्जमालाति वा] गणेज्जमाणेहिं पिट्ठिकरंडगसंधीहिं गंगातरंगभूएणं उरकडगदेसभाएणं, सुक्कसप्पसमाणाहिं वाहाहिं सिढिलकडाली विव चलतेहि (लंबतेहि) य अग्गहत्थेहिं, कंपणवातिओ विव वेवमाणीए सीसघडीए, पव्वादवदणकमले, उब्भडघडामुहे, उव्वुडुणयणकोसे, जीवंजीवेणं गच्छति, जीवंजीवेणं चिट्ठति, भासं भासिस्सामीति गिलाति, ३ से जहा णामते इंगालसगडियाति वा जहा खंदओ तहा जाव हुयासणे इव भासरासिपलिच्छन्ने तवेणं तेएणं तवतेयसिरीए उवसोभेमाणे उवसोभेमाणे चिट्ठति.

भावार्थ— मागधी भाषा के नियमानुमार ' णं ' वाक्यालंकार के लिये सर्वत्र जानना – तपोधन धन्य अनगार के पैर, पिंडियां और जंघाएँ मांस रहित होने से शुष्क थीं और क्षुधा के कारण रूक्ष थीं, उनकी कमर रूप कडाह (कडायला अथवा काचबे की पीठ) मांस के अभाव से और हड्डियां ऊँची निकली हुई होने से अशोभानिक मालूम होती थीं – इसके आस पास का हिस्सा ऊँचा था, उनका उदर रूप भाजन मध्य में दुर्बल

होने से पीठ से लगा हुवा था, कारण कि पेट के अन्दर की ' यकृत और प्लीहा ' नाम की गांठे क्षय होगई थीं उनकी पांसलियां की श्रेणियां मांस रहित होने से स्पष्टतः वलयाकर (गोलाकार) दिखाई देती थीं, उनकी पीठ रूपी करण्डिये की सन्धियाँ (सांधें) कमजोरी के कारण अति स्पष्ट होने से सूत की माला की तरह गिनी जासकती थीं; उनका पेट गंगा नदी की तरङ्गों जैसा था; यानी तरंगों जैसे ऊपराऊपरी चडती हैं उस तरह हड्डियां उपराऊपरी चडी हुई नज़र आती थीं, उनके पीठ के दो भाग बांस के टुकड़े जैसे थे, उनकी दोनों भुजाएँ सूखे सर्प जैसी मालूम होती थीं, उनके हाथ के पंजे घोड़े के ढीले चोकडों की तरह लटकते थे, उनकी मस्तकरूपी घड़ी कंपवायु के रोगीके समान कंपती थी, उनका मुख कमल कुमलाया हुवा (मुरझाया हुवा) था-होठों की अत्यन्त क्षीणता होने से उनका मुख घड़े के सदृश विकराल नज़र आता था, उनके दोनों नेत्र रूपी कोस ऊंडे उतर गये थे; शरीर की ऐसी गंभीर स्थिति में - वे महात्मा मात्र आत्मबल से ही चलते थे; कारण कि शरीर बल से चलने में वे पूर्ण असक्त थे, आत्मबल से ही वे खड़े रहसकते थे, ' मैं कुछ बोलूं ' ऐसा विचार होते ही ग्लानि (अशक्ति का प्रभाव) उत्पन्न हो जाती थी, उनके शरीर की ऐसी परिस्थिति हो गई थी कि चलते समय कोयलों की भरी हुई गाडी के समान उनके हाड खडखड आवाज़ करते थे-भगवती सूत्र में स्कन्दक मुनि के वर्णन के मुआफिक यहां जानना-राख के ढगले से ढकी हुई अग्नि की तरह तपसे - तेज से और तपतेज की समृद्धि से अत्यन्त शोभते

हुवे वे उग्र तपस्वी धन्य अनगार रहते थे – " धन्य हो ! तपोधन महा तपस्वी धन्य अनगार को कोटिशः नमस्कार हो – ऐसे महात्मा की पुनः २ जय हो. "

श्रेणिक नृपेन्द्र का नमूनेदार प्रश्न–भगवन्त का स्पष्टीकरण

मूल— तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णगरे गुणासिलए चेतिते, सेणिए राया; तेणं कालेणं तेणं समएणं भगवं महावीरे समोसढे, परिसा णिग्गया, सेणिते निग्गए, धम्मकहा परिसा पडिगया, तते णं से सेणिए राया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म समणं भगवं महावीरं वंदति णमंसति, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–

भावार्थ— उस काल उस समय मे राजगृही नामकी नगरी थी, उसके बाहार गुणशील नामका उद्यान था, इस नगरी में महाराजा श्रेणिक राज्य करते थे, उस वक्त उस टाइम पर श्रमण भगवन्त महावीर देव उद्यान में समवसरे, नगर से प्रजा पर्षदा दर्शनार्थ रवाना हुई राजा श्रेणिक भी राजमहल से निकला, प्रभु ने

धर्म देशना दी, पर्षदा वापिस चली गई – तदन्तर श्रेणिक नृपेन्द्र ने श्रमण भगवन्त महावीर देव के पास धर्म सुनकर हृदय में धारण करके प्रभु को (श्रमण भगवन्त महावीर को) वन्दन – नमस्कार किया, वन्दन – नमस्कार करके इस प्रकार प्रार्थना की—

मूल— इमासि णं भते ! इंदभूतिपामोक्खाणं चोद्दस्सण्हं समणसाहस्सीणं कतिरे अणगारे महादुक्करकारए चेव ? महाणिज्जरतराए चेव ? एवं खलु श्रेणिया ! इमासिं इंदभूतिपामोक्खाणं चोदसण्हं समणसाहस्सीणं धन्ने अणगारे महादुक्करकारए चेव महाणिज्जरतराए चेव, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति इमासिं जाव साहस्सीणं धन्ने अणगारे महादुक्करकारए चेव महाणिज्जरकारए चेव ?

भावार्थ— हे भगवन्त ! आपके इन्द्रभूति (गौतम गणधर) आदि १४ हजार मुनियों में दुष्कर कार्य करने वाले और महा निर्जरा करने वाले कौनसे महात्मा हैं ? इस पर परमात्मा ने उत्तर बक्षा – निश्चय इस प्रकार हे श्रेणिक ! इन इन्द्रभूति वगैरः चौदह हजार मुनियों में 'धन्य अनगार' महा दुष्कर कार्य करने वाला और महा निर्जरा करने वाला है * श्रेणिक नरेन्द्र ने पुनः प्रार्थना की – हे प्रभो ! किस हेतु से आप का यह

* धन्य हो ! धन्य अनगार– जिसके लिये परमात्मा महावीर देव श्री मुख से गौरव पूर्ण प्रशंसा करते हैं

फरमाना है कि इन यावत् चौदह हजार साधुओं में धन्य अनगार महा दुष्कर कार्य करने वाले और महा निर्जरा करने वाले हैं ? इस पर देवाधिदेव ने जवाब बक्षा—

मूल— एवं खलु सेणिया ! तेणं कालेणं तेणं समएणं काकंदी नामं नगरी होत्था, उप्पिं पासाए-वडिंसए विहरति, तते णं अहं अन्नया कदाति पुव्वाणुपुव्वीए चरमाणे गामाणुगामं दुत्तिज्जमाणे जेणेव काकंदी णगरी जेणेव सहसंबवणे उज्जाणे तेणेव उवागते अहापडिरूवं उग्गहं उगिणित्ता संजमेणं तवसा जाव विहरामि, परिसा निग्गता, तहेव जाव पव्वइते जाव बिलमिव जाव आहारेति, धन्नस्स णं अणगारस्स पादाणं सरीरवन्नओ सव्वो जाव उवसोभेमाणे उवसोभेमाणे चिट्ठति से तेणट्ठेणं सेणिया ! एवं वुच्चति-इमासिं चउद्दसण्हं साहस्सीणं धण्णे अणगारे महादुक्करकारए महानिज्जरतराए चेव ।

भावार्थ— निश्चय करके इस प्रकार हे श्रेणिक ! उस काल उस समय मे काकन्दी नामकी एक नगरी थी, उसमें यावत् (पूर्ववत् सब हकीकत कहकर) धन्य कुमार भव्य महलों पर रहता था, उस समय हम किसी एक वक्त अनुक्रम से विहार करते हुवे ग्रामानुग्राम विचरते हुवे जहां काकंदी नगरी है, जहां उसके बाहर सहस्राम्रवन है ,वहां प्राप्त हुवे, यथाप्रतिरूप (मुनियो के योग्य) अवग्रह (रहने का स्थान) ग्रहण करके संयम – तप द्वारा

ध्यातम भावना करते हुवे रहे, पर्षदा देशना सुनने आई, उसही प्रकार (पूर्व कथानुसार) यावत् धन्य कुमार ने दीक्षा अंगीकार की; ' बिल सर्पवत् ' यावत् आहार करता है, धन्य अनगार का पग से शरीर तक का सर्व वर्णन यावत् अतिशय शोभता हुवा रहता है- ऐसा परमात्मा ने फरमाया - इसलिये हे श्रेणिक ! वह धन्य अनगार चौदह हज़ार साधुओं में महा दुष्कर कार्य करने वाला और महा निर्जरा करने वाला है; ऐसा कहा गया.

श्रेणिक नरेश से धन्य अनगार की स्तुति

मूल— तते णं से सेणिये राया समणस्स भगवतो महावीरस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ तुट्ठ (जाव) समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेति करित्ता वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता जेणेव धन्ने अनगारे तेणेव उवागच्छति उवागच्छित्ता धन्नं अणगारं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेति करित्ता वंदति णमंसति वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी – धण्णेसिणं तुमं देवाणुप्पिया ! सुपुण्णे सुकयत्थे कयलक्खणे सुलद्धेणं देवाणुप्पिया ! तव माणुस्सए जम्म जीवियफलेतिकट्टु वंदति णमंसति

वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवगच्छति उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो वंदति णमंसति वंदित्ता णमंसित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूते तामेव दिसिं पडिगए. (सूत्रं ४)

भावार्थ— तत्पश्चात् वे श्रेणिक राजा श्रमण भगवन्त महावीर देव के पास से यह वृतान्त सुनकर हृदय में धारण कर हर्षित हुवे – आनन्दित हुवे, श्रमण भगवन्त महावीर देव को तीन वार आदक्षिणा प्रदक्षिणा की करके वन्दन – नमस्कार किया, वन्दन नमस्कार करके जहां पर धन्य अनगार हैं वहां पर महाराजा श्रेणिक आते हैं, आकर तपोधन धन्य अनगार को तीन वार आदक्षिणा प्रदक्षिणा करते हैं, करके वन्दन – नमस्कार किया, वन्दन – नमस्कार करके इस प्रकार निवेदन किया — हे देवों के वल्लभ ! आप धन्य हैं, कृत पुण्य हैं, सुकृतार्थ हैं, कृत लक्षण है, अहो देवों के प्यारे ! आपका सुप्राप्त मनुष्य – जीवन सफल है ऐसा कहकर तपस्वी महात्मा को वन्दन – नमस्कार किया, वन्दन – नमस्कार करके जहां श्रमण भगवन्त महावीर देव हैं वहां नरेन्द्र श्रेणिक आता है, आकर परमात्मा को तीन वार आदक्षिणा – प्रदक्षिणा करके वन्दन – नमस्कार करता है, वन्दन – नमस्कार करके जिस दिशा से आया था उसही दिशा में वापिस चला गया.

धन्य अनगार का मनोरथ और उसका पूर्ण पालन

मूल— तएणं तस्स धण्णस्स अणगारस्स अन्नया कयाति पुव्वरत्तावरतकाले धम्मजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अब्भत्थिते चिंतिते मणोगते संकप्पे समुप्पाजित्था – एवं खलु अहं इमेणं ओरालेणं जहा खंदओ तहेव चिन्ता, आपुच्छणं थेरेहिं सद्धिं विउलं दुरूहंति मासिया संलेहणा नवमास परियातो जाव कालमासे कालं किच्चा उड्ढं चंदिम जाव णव य गेविज्जाविमाणपत्थडे उड्ढं दूरं वीतीवतित्ता सव्वट्ठसिद्धे विमाणे देवत्ताए उववन्ने, थेरा तहेव उयरंति जाव इमे से आयार भंडए।

भावार्थ— उसके बाद किसी एक दिन अर्धरात्री के समय धर्म जागरण में जगते हुवे उग्र तपस्वी धन्य अनगार को इस प्रकार का प्रार्थित, चिन्तित, मनोगत विचार उत्पन्न हुवा – "निश्चय इस प्रकार मैं इस उदार तप द्वारा" इत्यादि स्कन्दक मुनि की तरह विचार हुवा, पश्चात् प्रातः काल में भगवन्त महावीर की आज्ञा

प्राप्तकर स्थविर मुनियों को साथ में लेकर विपुलगिरि पर चढे, वहां एक मास की संलेखना (आत्म शोधक तप) कर नौ मास पर्यन्त उज्ज्वल चारित्र पालकर काल समय काल कर ऊँचे चन्द्रादि विमान को उल्लंघन कर यावत् नौग्रैवयिक प्रतरों कों बटा कर बहुत ऊँचे दूर सर्वार्थसिद्ध विमान में देवपने उत्पन्न हुवे – तब स्थविर मुनि पूर्व कथनानुसार कायोत्सर्ग करके धन्य अनगार के उपगरण लेकर पर्वत से नीचे उतरे यावत् उनके भांडोपगरण भगवन्त के पास रक्खे.

धन्य अनगार के लिये गौतम गणधर का आख़ीरी प्रश्न – परमात्मा का खुलासा

मूल— भंतेति भगवं गोतमे तहेव पुच्छाति जहा खंदयस्स, भगवं वागरोति जाव सव्वट्ठसिद्धे विमाणे उववण्णे; धण्णस्सणं भंते ! देवस्स केवतियं कालं ठिति पण्णत्ता ? गोयमा ! तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिति पन्नत्ता, से णं भंते ! ततो देवलोगाओ कहिं गाच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ? गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति बुज्झिहिति मुच्चिहिति परिणिव्वाहिति सव्वदुखाणमंतं करेहिति – एवं खलु जंबू ! सम–

गेणं जाव सम्पत्तेणं पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पन्नत्ते। (सूत्रं ५) पढमं अज्झयणं सम्मत्तं.

भावार्थ— परमात्मा महावीर देव को गौतम स्वामी ने खंदक की पृच्छा की तरह पृच्छा की - इस पर प्रभु ने फरमाया - धन्य अनगार यावत् सर्वार्थसिद्ध विमान में उत्पन्न हुवा, गौतम गणधर ने पूछा - हे देवाधि-देव ! धन्य देव की कितने काल की स्थिति फरमाई ? उत्तरः— हे गौतम ! तेतीस सागरोपम की स्थिति कही गई पुनः गौतम स्वामी ने पूछा - हे प्रभो ! वह धन्य अनगार देवलोक से च्यय कर कहां जायगा ? कहां उत्पन्न होगा ? प्रभु ने फरमाया - महाविदेह क्षेत्र मे उत्पन्न होकर, चारित्र ग्रहण कर सिद्ध होगा, बुद्ध होगा, सर्व कर्म से मुक्त होगा, निर्वाण पद प्राप्त करेगा, सर्व दुःखों का अन्त करेगा - सुधर्म स्वामी फरमाते हैं - हे जम्बो ! श्रमण भगवन्त महावीर देव यावत् मोक्ष पधारे ने पहिले अध्ययन का इस प्रकार (ऊपर कहे मुजिब) अर्थ फरमाया - पहिले अध्ययन का भावार्थ सम्पूर्ण हुवा.

तीसरे वर्ग का पहिला अध्ययन मूल और भावार्थ सहित सम्पूर्ण हुवा.

* दूसरा अध्ययन *

(सुनक्षत्र कुमार)



मूल— जति णं भंते ! उक्खेवओ – एवं खलु जम्बू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं काकंदीए णग-रीए भद्दा णामं सत्थवाही परिवसति अड्ढा, तीसेणं भद्दाए सत्थवाहीए पुत्ते सुणक्खत्ते णामं दारए होत्था अहीण जाव सुरूवे पंचधातिपरिक्खिते जहा धण्णो तहा बत्तीसदाओ जाव उप्पिं पासाएवडेंसए विहरति; तेणं कालेणं तेणं समएणं समोसरणं जहा धन्ने । तहा सुणक्खत्ते वि णिग्गते जहा थावच्चा पुत्तस्स तहा णिक्खमणं जाव अणगारे जाते ईरियासमिते जाव बंभयारी ।

भावार्थ— जम्बू स्वामी सुधर्म स्वामी के प्रति प्रार्थना करते हैं – हे भगवन्त ! पहिले अध्ययन का अर्थ आपने जो इस प्रकार प्रकाशित किया तो हे पूज्य ! अब दूसरे अध्ययन का उत्क्षेप (प्रस्तावना – बयान) फर-माने की कृपा करो ! तब सुधर्म स्वामी ने फरमाया – निश्चय इस कदर हे जम्बो ! उस काल उस समय में

काकन्दी नामकी नगरी में भद्रा सार्थवाहिनी निवास करती थी, वह समृद्धिशालिनी थी, उस भद्रा सार्थवाहिनी के ' सुनक्षत्र कुमार ' नामका पुत्र था, उसके अङ्गोपाङ्ग अहीन पूर्ण पंचेन्द्रीय वाले थे, यावत् वह कुमार स्वरूपवान् - कान्तिवान और दिखनोटा था, पच धायमाताओं से उसका सम्यक् पालन होता था, जब वह युवा अवस्था में प्रवेश हुवा तब धन्य कुमार के मुआफिक बत्तीस कन्याओं से विवाह कराकर बत्तीस महल वगैरः का प्रीतिदान दिया यावत् वह कुमार महल के ऊपर उन ललनाओं के साथ क्रीड़ा करता हुवा रहता था, उस काल उस समय के अन्दर श्रमण भगवन्त महावीर देव नगर के उद्यान में समवसरे उस वक्त धन्य कुमार के सदृश सुनक्षत्र कुमार भी प्रभु को वन्दनार्थ घरसे निकला, धर्मदेशना सुनकर प्रतिबोध को प्राप्त हुवा, थावच्चापुत्र की तरह दीक्षा महोत्सव हुवा यावत् मुनिपद को प्राप्त हुवा, ईर्यासमिति आदि का यथार्थ पालन करता हुवा यावत् गुप्त ब्रह्मचारी यानी ब्रह्मचर्य की नौ गुप्ति (वाड़) का पालक हुवा.

सुनक्षत्र अनगार का तप वर्णन

मूल— तते णं से सुणक्खते अणगारे जं चेव दिवसं समणस्स भगवतो महावीरस्स अंतिते मुंडे

जाव पव्वातिते तं चेव दिवसं अभिग्गहं तहेव जाव बिलमिव आहारेति संजमेण जाव विहरति, बहिया जणवयविहारं विहरति, एक्कारस अंगाइं अहिज्जाति संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति, तते णं से सुणक्खत्ते अणगारे ओरालेणं जहा खंदतो ।

भावार्थ— तत्पश्चात् उस सुनक्षत्र अनगार ने जिस दिन से श्रमण भगवन्त महावीर देव के पास मस्तक मुंडाकर दीक्षा अङ्गीकार की उसही दिन से (धन्य अनगार की तरह) अभिग्रह धारण किया, यावत् ' सर्प बिलवत् ' पारणे के दिन आहार करने लगा यावत् संयम सहित विचरने लगा, बाहार देशों मे विहार करने लगा, ग्यारह अङ्गों का अभ्यास किया, इस तरह संयम-तप द्वारा आत्म भावना करता हुवा रहने लगा, तब वह सुनक्षत्र अनगार खंदक मुनि के समान उदार तपश्चर्या करता हुवा आनन्द पूर्वक निवास करने लगा.

सुनक्षत्र अनगार का सफल मनोरथ ओर अन्तिम अवस्था

मूल— तेणं कालेणं तेणं समएणं रायागिहे णगरे गुणासिलए चेतिए, सेणिए राया, सामी समोसढे

परिसा णिग्गता, राया णिग्गतो धम्म कहा, राया पडिग्गओ परिसा पडिगता, तते णं तस्स सुणक्खत्तस्स अन्नया कयाति पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स जहा खंदयस्स बहूवासा परियातो, गोतम पुच्छा, तहेव कहेति, जाव सव्वट्ठसिद्धे विमाणे देवे उववण्णे तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिति पण्णता से णं भंते ! महाविदेहे सिज्झिहिति— वितियं अज्झयणं सम्मत्तं ॥ २ ॥

भावार्थ— चौथे आरे में भगवन्त पधारे उस समय राजगृही नामका नगर था, उसके इशान कोण में गुणशील संज्ञक उद्यान था, उस नगर में श्रेणिक नाम का राजा राज्य करता था, वहां पर किसी एक वक्त भगवन्त महावीर देव पधारे, प्रजा पर्षदा और नृपेन्द्र अपने स्थान से प्रस्थान कर प्रभु को वन्दन करने आया, प्रभु ने धर्म देशना दी, श्रवण कर राजा और पर्षदा वापिस चली गई— यहां पर महाराजा श्रेणिक ने दुष्कर कार्य कर्त्ता कौन है इत्यादि भगवन्त से प्रश्न किया ? सर्व पूर्ववत् जानना — तदनन्तर किसी एक वक्त मध्यरात्री के समय धर्मजागरण (धर्मध्यान) करता हुवा सुनक्षत्र अनगार ने खंदक अनगार की तरह अनशन करने का विचार किया, यावत् परमात्मा की आज्ञा लेकर पूर्ववत् सर्व किया; बहुत वर्षो तक चारित्र पर्याय पाला; गोतम गणधर ने इनके बारे में पूछा तब भगवन्त ने सर्व हकीकत कही, यावत् सर्वार्थसिद्ध विमान में देव पने

उत्पन्न हुवा, तेतीस सागरोपम की स्थिति फरमाई – गौतम स्वामी ने प्रभु से पुनः पूछा, हे भगवन्त ! सुनक्षत्र अनगार देवलोक से च्यवकर कहां उत्पन्न होगा ? परमात्मा ने उत्तर बक्षा – हे गौतम ! महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर, चारित्र ग्रहण कर यावत् मोक्ष पद को प्राप्त करेगा – दूसरे अध्ययन का भावार्थ सम्पूर्ण हुवा.

तीसरे वर्ग का दूसरा अध्ययन मूल और भावार्थ सहित सम्पूर्ण.

❋ तीसरा अध्ययन यावत् दसवां अध्ययन ❋

(ऋषिदास कुमार यावत् वेहल्ल कुमार)

दस अनगारों की सामान्य व्यवस्था

मूल— एवं सुणक्खत्तगमेणं सेसावि अट्ठ भाणियव्वा णवरं – आणुपुव्वीए दोन्नी रायगिहे, दोन्नी

साएए, दोन्नी वाणियग्गामे, नवमो हत्थिणापुरे, दसमो रायगिहे, नवण्हं भद्दाओ जणणीओ, नवण्हं वि वत्तीसओदाओ, नवण्हं निक्खमणं थावच्चापुत्तस्स सरिसं वेहल्लस्स पिया करेति छम्मासा वेहल्लते नव धण्णे सेसाणं वहुवासा, मास संलेहणा, सव्वट्ठसिद्धे महाविदेहे सिज्झणा ।

भावार्थ— इस ही प्रकार सुनक्षत्र कुमार के आलावे से शेष आठों कुमारों का बयान करना; विशेपता में – अनुक्रम से दो कुमार राजगृही नगर में हुवे, दो साकेत नगरमें हुवे, दो वाणिज्य ग्राम में हुवे, नवें हस्तिनापुर में हुवे, और दसवें राजगृही नगर में हुवे; नवों कुमारों की माताएँ भद्रा नामकी थी, नवों को वत्तीस २ कन्याओं के साथ विवाह कराया गया था और वत्तीस २ महल वगैरः तमाम वस्तुओं का प्रीतिदान दिया गया था, नवों का दीक्षा–महोत्सव थावचापुत्र की तरह हुवा था और दसवें वेहल्ल कुमार का दीक्षा महोत्सव उसके पिता ने किया था, पहिले धन्य अनगार ने नौमास चारित्र पाला और दसवें वेहल्ल कुमार ने छः मास चारित्र पाला, शेप आठ अनगारों ने बहुत वर्षों तक चारित्र पर्याय पाली, दसों मुनीश्वरों ने एक २ मास का अनशन तप किया, सर्व सर्वार्थसिद्ध नामक विमान मे उत्पन्न हुवे; वहां से महाविदेह क्षेत्र मे जन्म लेकर, पारमेश्वरी प्रव्रज्या ग्रहण कर मोक्ष पद को प्राप्त करेंगे – इस में दस अनगारों का अवशेप क्रमवद्ध नहीं है; अतः पूर्व आख्यान को

ध्यान में रखकर इस व्यवस्था को समझना — धन्य हो ! महा तपस्वी अनगारों को धन्य हो ! इन पुरुषोत्तमों को पुनः २ अभिवन्दन हो.

सुधर्म गणधर से परमात्मा का गुणानुवाद

मूल— एवं खलु जम्बू ! समणेणं भगवता महावीरेणं आइगरेणं तित्थगरेणं सयंसंबुद्धेणं लोगना-हेणं लोगप्पदीवेणं लोगपज्जोयगरेणं अभयदएणं सरणदएणं चक्खुदएणं मग्गदएणं धम्मदएणं धम्मदेसएणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टिणा अप्पडिहयवरनाणदंसणधरेणं जिणेणं जाणएणं बुद्धेणं बोहएणं मोक्केणं मोयएणं तिन्नेणं तारएणं सिवमयलमरुयमणंतमक्खयमव्वाबाहमपुणरावत्तयं सिद्धिगतिनामधेयं ठाणं संपत्तेणं अणुत्तरोववाइयदसाणं तच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते. (सूत्रं ६) तइयं वग्गं सम्मत्तं – अणुत्तरोववाइयद-सातो समत्तातो.

भावार्थ—इस प्रकार निश्चय हे जम्बू ! श्रमण भगवन्त महावीर देव जो कि धर्म के आदि कर्ता हैं (अपने शासन मे आदि कर्ता समझना) तीर्थ (साधु-साध्वी-श्रावक श्राविकारूप चतुर्विध संघ) के संस्थापक हैं, स्वयं बोध को प्राप्त हुवे हैं यानी उनका कोई गुरु नहीं, लोकके नाथ हैं, कारण कि संसार के योग-क्षेम (हित सम्बंध-कल्याण) करने वाले हैं, लोकके अन्दर दीपक समान हैं अर्थात् मिथ्यात्व अंधकार को नाश कर सम्यत्वरूप प्रकाश करने वाले हैं, लोक मे उद्योत करने वाले हैं यानी अज्ञान को हटाकर ज्ञान का उद्योत करने वाले हैं, अभयदान (निर्भयता) देनेवाले हैं, अशरण को शरण देनेवाले हैं, ज्ञानरूप चक्षु के दातार हैं, मार्ग देनेवाले यानी श्रेय मार्ग दर्शक हैं, धर्म को देनेवाले हैं यानी पापो से मुक्त कराने वाले हैं, धर्म देशना देने वाले हैं, धर्म के श्रेष्ठ चार दिशाओं के अन्तपर्यन्त चक्रवर्ती हैं अर्थात् धर्मोपदेश से चारगतियों का अन्त कराने वाले हैं, किसी से प्रतिघात न होसके ऐसे श्रेष्ठज्ञान दर्शन को धारण करने वाले हैं, खुद राग-द्वेष पर विजय किया है, दूसरे को राग-द्वेष जिताने वाले हैं. खुद बोध को प्राप्त हुवे, दूसरों को बोध प्राप्त कराते हैं, खुद कर्मों से मुक्त हुवे हैं, दूसरों को कर्मों से मुक्त कराते हैं, खुद संसार समुद्र से तिरगये हैं, दूसरों को भवसागर से तिराते हैं तथा वे भगवन्त निरुपद्रव - अचल - रोगरहित - अनन्त - अक्षय - बाधा रहित-पुनरावृत्ति न हो ऐसे सिद्धिगति नाम स्थान को प्राप्त किया है; उन परमात्माने अणुत्तरोपपातिकदशा के तीसरे वर्ग का यह अर्थ फरमाया है. तीसरे वर्ग का भावार्थ पूर्ण हुवा — अणुत्तरोपपातिकदशा का भावार्थ सम्पूर्ण हुवा.

❀ उपसंहार ❀

इस तीसरे वर्ग में धन्यअनगार (धन्नाजी अनगार) वगैरः दस महामुनीश्वरों के आदर्श चरित्र तपश्चर्या से मारतण्ड (सूर्य) के समान संसार पर प्रकाश डाल रहे हैं—तपोधन के तप से शरीर का मूल्य हीरों के मूल्य से भी अधिक बन कर जगत के लिये प्रेरणात्मक एक दिव्य दृष्टान्त बन गया है; जगद्वंद्य इन महात्माओं का चरित्र वंदनीय और स्तवनीय सीमा को उलंघन कर अनुकरणीय क्षेत्र में प्राप्त होगया है— महानुभावो ! इन उत्तम पुरुषों के चरित्रों पर पूर्ण मनन कर अस्वादव्रत को अङ्गीकार करना और खाने का मोह छोड़कर श्रेयपद प्राप्ति के लिये आदर्श तपस्वी बनने का पूर्ण प्रयत्न करना.

टीकाकार महाराज का वक्तव्य

शब्दाः केचन नार्थताऽत्र विदिताः केचित्तु पर्यायतः । सूत्रार्थानुगतेः समूह्य भणतो यज्जातमागः पदम् ॥
वृत्तावत्र तज्जिनेश्वरवचोभाषाविधौ कोविदैः । संशोध्य विहितादरैर्जितमतोपेक्षा यतो न क्षमा ॥ १ ॥

प्रत्यक्षरं निरूप्यास्य । ग्रन्थमानं विनिश्चितं ॥ द्वाविंशतिशतामीति । चतुर्णां वृत्तिसंख्यया ॥ २ ॥

भावार्थ— भगवान् श्री अभयदेव सूरीश्वरजी महाराज अपनी लघुता प्रदर्शित करते हुवे फरमाते हैं— संभव है कि इस सूत्र में कितनेक शब्दों का अर्थ मुझे ज्ञात नहीं हुवा हो तथा कितनेक शब्द के पर्याय मालूम नहीं हुवे हों तथापि सूत्र और अर्थ के अनुसार जो मैंने अर्थ किया है यानी टीका रची है उसमें जो अपराधपद (भूल का स्थान) बना हो उस को जिनेश्वर भगवन्त के वचन की भाषा में आदर करने वाले पंडितजन संशोधन करे कारण कि जिनेश्वर के मत की उपेक्षा करना योग्य नहीं इस ग्रन्थ की टीका के प्रत्येक अक्षर गिनने से १२२, सौ बावीस श्लोक जितना ग्रन्थ का (टीका का) प्रमाण है; ऐसा निश्चय किया है.

॥ ग्रन्थ का उपसंहार ॥

यह अनुत्तरोपपातिक सूत्र तीन वर्ग में तेंतीस अध्ययनों से भूषित है; अर्थात् तेंतीस महापुरुषों के उद्दाम जीवन से आदर्श बन गया है, इस सारे ग्रन्थ में तपश्चर्या की महेक छारही है, इससे अनहारिक पद का प्रकाश जगत को आसक्ति तिमिर से मुक्त कराता है, इसमें महात्माओं की तपश्चर्या का विविध वर्णन असक्तों को शक्ति प्रदान करता है और ससक्तों को आगे बढाता है — महानुभावो ! जीवन की सार्थकता खान - पान से

नहीं होसकती, किन्तु तपश्चर्या से ही सफलता होगी; अतएव आप अपनी कृतार्थता के लिये यथाशक्ति तपश्चर्या कर उन तपोधन महापुरुषों का अनुकरण करें.

॥ प्रशस्तिका ॥

शासनपति के पाट पर । हुवे सुधर्म गणीन्द्र ॥ सदसटवें पट पर हुवे । श्री जिन भक्ति मुनींद्र ॥ १ ॥
क्षमा कल्याण पाठक गुरु । सुखसागर भगवान् ॥ त्रैलोक्य गुरु गणनाथ से । पाया निर्मल ज्ञान ॥ २ ॥
वीरपुत्र आनन्द ने । ज्ञान भक्ति सुविचार ॥ भारत भाषा में लिखा । अङ्ग नवाँ विस्तार ॥ ३ ॥
मालव देशे दीपता । सैलाना श्रीकार ॥ चौमासा सुख से रहे । वर्ता जय जय कार ॥ ४ ॥
विक्रम मू नव वानवे (१९९२) । भाद्रव पूनम जान ॥ गुरुवारे यह सूत्र हम । पूर्ण किया गुणखान ॥ ५ ॥

❀ श्रीअनुत्तरोपपातिकदशा सूत्र सम्पूर्ण ❀

Veerputra Anand Sagar.

Sailana-C. I.

श्री अनुत्तरोपपातिक सूत्र हिन्दी अनुवाद सह समाप्त